सुल्ताना

रज़ीयाबेगम

वा

रङ्गमहल में हलाहल

(उपन्यास)

पहिलाभाग ।

श्रीकिशोरीलालगोस्वामि-लिखित.

" यौवनं धनसम्पत्तिः प्रभुत्वमविवेकिता ।
एकैकमप्यनर्थाय किमु यत्र चतुष्टयम ॥"

(सुभाषित)

" ये वो मिसरी की डली है कि नबात इससे करे ।
संखिया खाके मरे, इसको ज़बाँ पर न धरे ॥"

(दाग़)

श्रीछबीलेलालगोस्वामि-द्वारा
श्रीसुदर्शनप्रेस वृन्दावन में मुद्रित और प्रकाशित.
दूसरीवार १०००) सन् १९१५ ईस्वी. (मूल्य बारह आने

सुल्ताना

रज़ीयाबेगम

वा

रङ्गमहल में हलाहल

(उपन्यास)

पहिलाभाग ।

श्रीकिशोरीलालगोस्वामि-लिखित.

" यौवनं धनसम्पत्तिः प्रभुत्वमविवेकिता ।
एकैकमप्यनर्थाय किमु यत्र चतुष्टयम् ॥"

(सुभाषित)

" ये वो मिस्री की डली है कि नबात इससे करे ।
संखिया खा के मरे, इसको ज़बाँ पर न धरे ॥"

(दाग़)

——*—*——

श्रीछबीलेलालगोस्वामि-द्वारा

श्रीसुदर्शनप्रेस वृन्दावन में मुद्रित और प्रकाशित.

दूसरीवार १०००]   सन् १९१५ ईस्वी.   [मूल्य बारह आने ।

उपोद्घात ।

भारतवर्ष में सदा से सूर्यवंशी और चन्द्रवंशी राजाओं का राज्य तबतक स्वाधीन भाव से चला आया, जबतक इस देश में सरस्वती और लक्ष्मी का पूरा पूरा आदर रहा; ब्राह्मणों के हाथ में विधि थी, क्षत्रियों के हाथ में खड्ग था, वैश्यों के हाथ में वाणिज्य था और शूद्रों के हाथ में सेवाधर्म था; किन्तु जबसे यह क्रम बिगड़ने लगा, ऐक्य के स्थान में फूट ने अपना पैर जमाया और सभी अपने कर्तव्य से च्युत होने लगे, देश की स्वतंत्रता भी ढीली पड़ने लगी और बाहरवालों को ऐसे अवसर में अपना मतलब गांठ लेना सहज होगया।

लाखों बरस, अर्थात सृष्टि के आरंभ काल से यह (भारतवर्ष) स्वाधीन और सारे भूमंडल पर आधिपत्य करता आता था, पर महाभारत के पीछे यहांवालों की बुद्धि कुछ ऐसी बिगड़ गई और आपस की फूट के कारण जयचंद ने ऐसा चौका लगाया कि यह स्वाधीन देश सदा के लिये गुलामी की जंज़ीर से जकड़ दिया गया, जिससे अब इसका छुटकारा पाना कदाचित कठिन ही नहीं, वरन असम्भव भी है।

इसदेश (भारतवर्ष) पर पश्चिमवालों की चढ़ाइयों का जो ठीक ठीक पता मिलता है, वह यह है कि ईस्वी सन् से ३३१ वर्ष पहिले यूनान के प्रतापी बादशाह सिकंदर ने ईरान के बादशाह दारा को जीतकर इस देशपर चढ़ाई की थी। वह एकलाख, बीस हज़ार फ़ौज के साथ सिंधुनदी में पुल बांधकर पार उतरा, किन्तु झेलम के इस पार केवल ग्यारह हज़ार सवार अपने साथ लाया था। उस समय मगध की गद्दीपर नागवंशी राजा महानन्द था, तथा और भी बहुत से राजे महाराजे इधर उधर राज करते थे। यद्यपि बहुत से राजाओं ने सिकंदर की आधीनता स्वीकार की थी, किन्तु पंजाब का राजा 'पुरु' झेलम के इस पार तीस पज़ार पैदल, चार हज़ार सवार और बहुत से हाथी साथ लेकर सिकन्दर से लड़ा। यदि संग्रामभूमि में उसके हाथी के बिगड़ने से उसकी फ़ौज भाग न खड़ी होती तो वह सिकन्दर को हरा चुका था, किन्तु ऐसा न हुआ और उसे पराजित होना पड़ा! फिर जब राजा पुरु सिकन्दर के पास गया तो उससे सिकन्दर ने पूछाः—'कहो! अब हम

तुम्हारे साथ किस तरह पेश आवें;' पुरुने धीरता से उत्तर दिया.– 'जिस तरह बादशाह अपने बराबर के बादशाहों के साथ पेश आते हैं।'

निदान, उसकी धीरता पर सिकन्दर बहुत प्रसन्न हुआ और उसे अपने बराबर बैठाया, तथा हिन्दुस्तान के उन सब हिस्सों को, जिन्हें उसने जीता था, उसी (पुरु) को देता गया। यह भारतवर्ष पर यवनों का पहिला चढ़ाव था। अब उसके आगे का हाल लिखते हैं, जिससे यहांका स्वाधीनता का भरपूर नाश हो गया।

सन् ५७० ई० में मुहम्मद पैदा हुआ था; चालीस बरस की अवस्था में उसने मुसलमानी धर्म का प्रचार करना प्रारम्भ किया और सन् ६३२ ई० में बासठ बरस के वय में वह परलोक सिधारा उसके मरने के बाद दूसरे ख़लीफ़ा उमर ने ईरान को जीतकर कुछ फ़ौज हिन्दुस्तान की ओर भेजी थी, किन्तु सिंधु के किसी राजा ने उसके सेनापति को मारडाला। फिर ख़लीफ़ा अली ने कुछ फ़ौज भेजकर सिंधु के किनारे का कुछ हिस्सा जीत लिया, किन्तु पीछे जब वहांकी लड़ाई में वही (अली) मारा गया तो मुसलमान निराश होकर हिन्दुस्तान के जीतने की आशा छोड़ बैठे।

सन् ७११ ई० में मुहम्मद के उत्तराधिकारियों में एक वलीद ख़लीफ़ा था, जिसकी फ़ौज ने सिंधु के किनारे बड़ा उपद्रव मचाया उसका सेनापति उसी (वलीद) का भतीजा था, और उसका नाम क़ासिम था। सो वह छःहज़ार फ़ौज के साथ हिन्दुस्तान पर चढ़ा था, किन्तु सिंधु के राजा दाहिर के मारेजाने पर उसकी दो लड़कियों ने ऐसा कौशल किया कि वलीद ने स्वयं क़ासिम को काट डाला। उस (क़ासिम) के मारेजाने के तीन बरस बाद उसका बेटा मुहम्मद फिर हिन्दुस्तान पर चढ़ा, पर चित्तौर के राजा बाप्पा से हार कर भाग गया।

इसके अनन्तर सन् ८१२ ई० में खुरासान के हाकिम ख़लीफ़ा हारूँरशीद के बेटे मामूँ रशीद ने हिन्दुस्तान पर चढ़ाई की, जिससे चित्तौर के राजा बाप्पा के परपोते खुमान से चौबीस लड़ाइयां हुईं, और अन्त में मामूँ को अपनी जान लेकर भागना पड़ा।

बुख़ारा के पांचवें बादशाह अब्दुल मलिक का अलप्तिगीन नामक एक गुलाम था, जो मलिक के मरने पर बादशाह हुआ। कुछ दिन पीछे उसे मारकर उसका गुलाम सुबुक्तिगीन बादशाह

हुआ और उसने अपना लक़ब 'अमीर नासिरुद्दीन सुबुक्तिगीन' रक्खा। इसने सन् ६७० ई० में ग़ज़नी को अपनी राजधानी बनाया और हिन्दुस्तान पर चढ़ाव किया, तथा लाहौर के राजा जयपाल को जीता। फिर उसके मरनेपर सन् ६६६ ई० में सुलतान महमूद अपने भाई इस्माईल को मार ग़ज़नी के तख़्तपर बैठा। सन् १००१ ई० में उस (महमूद ग़ज़नवी) ने हिन्दुस्तान पर पहिली चढ़ाई की और अपने बाप के बैरी जयपाल को क़ैद कर लिया। भटनेर के राजा को जीतने के लिये उसने सन् १००४ ई० में दूसरी चढ़ाई की। तीसरी चढ़ाई उसकी मुलतान के हाकिम अब्बुल फ़तह लोदी के जीतने के लिये सन् १००५ ई० में हुई। सन् १००८ ई० में चौथी चढ़ाई उसने जयपाल के बेटे आनन्दपाल के जीतने के लिए की और उसे जीत उस (महमूद) ने नगर कोट लूटा और भारतवर्ष की अनन्त लक्ष्मी वह लेगया। जिस लूट में पांचहज़ार मन सोना और बीस मन जवाहिर उसके हाथ लगा था। छठीं बेर सन् १०११ ई० में उसने थानेसर लूटा और सातवीं तथा आठवीं चढ़ाई जो उसने सन् १०१३ और १०१४ ई० में काश्मीर पर की थी, वहांके राजा संग्राम देव से हारकर अपने देश की शरण ली। नवीं बार बड़े धूम धाम से उसने सन् १०१७ ई० में कन्नौज पर चढ़ाई की, पर वहांके राजा के वश्यता स्वीकार करने पर वह मथुरा का नाश करता हुआ ग़ज़नी लौट गया। दसवीं बार वह सन् १०२२ ई० में कालिंजर पर चढ़ा और उसी बरस ग्यारहवीं चढ़ाई उसकी लाहौर पर हुई। बारहवीं बार सन् १०२४ ई० में उसने गुजरात पर चढ़ाई करके सोमनाथ के प्रसिद्ध मन्दिर को तोड़ा। इसके पीछे फिर वह हिंदुस्तान में नहीं आया और सन् १०३० ई० में मरगया। उसके मरने पर उसके वंशवालों का कुछ कुछ अधिकार केवल पंजाब पर रहा।

निदान, ग़ज़नी राज्य के निर्बल होनेपर ग़ोर के हाकिम जगत-दाहक (जहांसोज़) अलाउद्दीन ग़ोरी ने ग़ज़नी के अन्तिम बादशाह बहराम को मारकर अपने को वहाँका बादशाह बनाया और कुछ दिन पीछे उसके भतीजे शहाबुद्दीन मुहम्मद ग़ोरी ने बहराम के पोते खुसरो मलिक को मारकर ग़ज़नी के राजवंश का नाम सदा के लिये मिटा दिया। यही शहाबुद्दीन मुहम्मद हिंदुस्तान में मुसलमानी राज्य की जड़ जमानेवाला हुआ। इसने सन् ११७६ ई० से

लेकर सोलह बरस तक कई बार हिंदुस्तान पर चढ़ाई की, किंतु कुछ फल न हुआ। फिर कन्नौज के देशशत्रु राजा जयचंद के बहकाने से शहाबुद्दीन ने सन् ११९१ ई० में दिल्ली के चौहान राजा पृथ्वीराज पर बड़ी धूमधाम से चढ़ाई की, पर पृथ्वीराज से हार कर अपने देश को वह लौट गया। सन् ११९३ ई० में वह फिर बड़ी धूम से दिल्ली पर चढ़ा और हिंदुओं की सेना भी बड़े उमंग से उसका सामना करने के लिये मैदान में आई। उस समय चित्तौर के समरसिंह हिंदू सेना के नायक थे। लड़ाई की मोरचाबंदी होने पर शहाबुद्दीन ने रङ्ग, कुरङ्ग देख, टेढ़ी चाल चली और सुलह की बात चीत होने लगी। शहाबुद्दीन ने कहा कि,–'मैंने अपने भाई को यहांका हाल लिखा है, वहांसे जवाब आने तक लड़ाई मौक़ूफ़ रहे।' हिंदू सेना इस बातपर विश्वास करके सुचित्त होगई थी, कि एकाएक उस दग़ाबाज़ शहाबुद्दीन ने धोखा देकर रात के समय छापा मारा। उस धोखेबाज़ी में शहाबुद्दीन की बन आई, क्योंकि बहुत से हिन्दूवीर और सेनापति समरसिंह मारे गए और पृथ्वीराज तथा उनके कवि चंद बरदई क़ैद करके ग़ज़नी भेज दिए गए। वहां जाकर पृथ्वीराज ने शहाबुद्दीन के भाई ग़यासुद्दीन को शब्दवेधी बाण से मारडाला, फिर आप और चंद ने एक दूसरे के बाण से अपने अपने प्राण देदिए। हा! यह वही समय था, जिस घड़ी भारत की स्वाधीनता का सूर्य सदा के लिये अस्त होगया। हा! देश को पराधीनता की बेड़ी पहिराने के पातक के अतिरिक्त जयचन्द के हाथ कुछ भी न लगा, क्यों कि उसके राज्य को भी शहाबुद्दीन ने बुरी तरह से लिया और वह (जयचन्द) मारागया। किसीने सच कहा है कि फूट दोनों को चौपट करदेती है।

शहाबुद्दीन हिन्दुस्तान के जीतने पर यहांकी निगरानी के लिये अपने गुलाम कुतुबुद्दीन ऐबक को छोड़ता गया था। फिर जब शहाबुद्दीन मारागया तो उसका भतीजा महमूद ग़ोरी ग़ज़नी के तख़्त पर बैठा, और हिन्दुस्तान पर कुतुबुद्दीन ऐबक का कब्ज़ा रहा। समय की बलिहारी है कि भारतवर्ष के राजेश्वरों का राज्य एक गुलाम के आधीन हुआ।

कुतुबुद्दीन ऐबक को शहाबुद्दीन के भतीजे महमूद ग़ोरी ने बादशाह का ख़िताब भेज दिया, जिससे वह गुलाम हिन्दुस्तान के

निष्कण्टक राज्य का बादशाह हुआ। चार बरस राज्य करके जब वह मरगया, तब उसका बेटा आरामशाह दिल्ली के तख़्तपर बैठा, पर वह पूरे सालभर भी राज्य नहीं करने पाया था कि उसके बहनोई शमसुद्दीन अलतिमश ने, जो पहिले कुतुबुद्दीन का एक गुलाम था, उस (आरामशाह) को तख़्त से उतार, ताज अपने सिरपर रक्खा। उसके समय में बंगाल, मुलतान, कच्छ, सिन्धु, कन्नौज, बिहार, मालवा और ग्वालियर तक दिल्ली के राज्य में मिलचुके थे।

शमसुद्दीन के मरने पर उसका बेटा रुकनुद्दीन फ़ीरोज़शाह बादशाह हुआ, किन्तु वह ऐसा अय्याश और कुकर्मी था कि सल्तनत उसने अपनी मां के भरोसे छोड़ रक्खी थी और आप रातदिन नशे तमाशबीनी, और रंडी भडुओं में डूबा रहता था। उसकी मां भी बड़ी ही ज़ालिम थी, इसलिये दर्बारियों ने सात ही महीने के भीतर उसे तख़्त से उतार, उसकी बहिन रज़ीया बेगम को तीसरी नवम्बर, सन् १२३६ ईस्वी (सन् ६३४ हिजरी) में तख़्त पर बिठाया।

यह बेगम बड़ी चतुर थी। यद्यपि बहुत पढ़ी लिखी न थी, तौभी कुरान भलीभांति पढ़लेती थी। नित्य बादशाहों की भांति क़बा और ताज पहनकर तख़्त पर बैठ, दर्बार करती, नक़ाब मुंह पर कभी नहीं डालती और बड़े अदल इन्साफ़ के साथ लोगों की नालिश फ़र्याद सुनती थी; किन्तु वह अपने अस्तबल के दारोग़ा पर, जो एक अत्यन्त सुन्दर, बलिष्ठ और युवा था, और प्रतिदिन उसको बग़ल में हाथ का सहारा देकर उसे घोड़ेपर चढ़ाया करता था, आशिक होगई और उसे 'अमीरुलउमरा' का ख़िताब देबैठी। इस कारण दर्बारियों का जी उससे फिर गया। वह केवल तीन बरस, छः महीने और छः दिन राज्य करने पर, सन् १२३९ ई० के नवम्बर मास में तख़्त से उतारी जाकर भटिंडे के किले में क़ैद की गई। उस समय उस क़िले का मालिक एक तुर्की सर्दार था, जिसका नाम अल्तूनियां था। रज़ीया ने चकमें देकर उससे निक़ाह कर लिया और फ़ौज इकट्ठी करके उसे दिल्ली पर चढ़ा लाई; किन्तु हारी और अल्तूनियां के साथ अपने भाई बहरामशाह के हाथों

- -

मारी गई। (१) उसकी क़ब्र अबतक पुरानी दिल्ली में है।

रज़ीया के मारे जानेपर उसका दूसरा भाई मुइज़्ज़ुद्दीन बहराम दिल्ली का बादशाह हुआ, पर दो बरस, और दो महीने राज्य करके वह भी मारा गया और दर्बारियों ने उसके भतीजे अलाउद्दीन मसऊद को तख़्तपर बैठाया। किन्तु चार बरस बाद वह भी मारा गया और उसका चचा नासिरुद्दीन महमूद बादशाह हुआ। इसने राज काज के सारे भार को अपने बहनोई, और वज़ीर, ग़यासुद्दीन बलवन को, जो कि अलतिमश का गुलाम भी था, दे रक्खा था। सन् १२६६ ई० में नासिरुद्दीन के मरने पर ग़यासुद्दीन बलबन बादशाह हुआ और बीस बरस राज्य करके अस्सी बरस की अवस्था में मरा। उसके मरने पर जब उसके बेटे क़राख़ां ने तख़्त पर बैठना स्वीकार न किया तो उसके बेटे अर्थात नासिरुद्दीन के पोते मुइज्जुद्दीन कैक़ुबाद को तख़्तपर बैठाया गया, किन्तु वह ऐसा अय्याश था कि दो बरस भी राज्य न करने पाया और दर्बारियों ने उसे मारडाला और दिल्ली का राज्य गुलामों के वंश से निकल कर ख़िलजियों के हाथ में चला गया।

हम इस उपन्यास में रज़ीयाबेगम का हाल लिखते हैं, इसलिये हमें उसीके राजत्वकाल का इतिहासमात्र लिखना था; किंतु हमने स्वाधीन भारतवर्ष पर पश्चिमवालों की चढ़ाई के आदि से लेकर गुलाम ख़ान्दान तक का हाल, जिसमें रज़ीया पैदा हुई थी, इसलिए लिख दिया है कि जिसमें इतिहास के सिलसिले में गड़बड़ न हो और पढ़नेवाले उपन्यास के साथ ही साथ कुछ कुछ इतिहास का भी आनन्द लें, जिसमें लोगों की रुचि केवल उपन्यास ही पर न रह कर इतिहास की ओर भी झुके, जिससे हिन्दीभाषा में जो इतिहास का बिलकुल अभाव है, वह मिटे।

काशी	हिन्दी रसिकों का अनुगामी,
१ली, जनवरी, सन् १९०४ ई०	श्रीकिशोरीलालगोस्वामी।

(१) कोई कोई ऐसा भी कहते हैं कि वह [रज़ीया] जब दिल्ली को न ले सकी और अल्तूनियां मारा गया तो वह मर्दानी पोशाक में दिल्ली से भागी। जब वह रास्ते में सोगई तो किसी किसान ने उसकी पोशाक के तले ज़री और मोती टकी अंगिया देखली और औरत जानकर उसे मारडाला और गहने कपड़े उतार लाश जमीन में गाड़ दी।

सुल्ताना रज़ीयाबेगम

वा

रङ्गमहल में हलाहल

(उपन्यास)

पहिलाभाग।

पहिला परिच्छेद.

दिल्ली में धूम।

" हमेशा बदलता है ऐसा ज़माना।
कि है आज इसका, कल उसका ज़माना॥
दिखाता है नौरङ्ग क्या क्या ज़माना।
बहुत याद आता है पिछला ज़माना॥"

(सफ़दर)

दिल्ली में आज बड़ी धूम है! जो दिल्ली, या देहली भारतवर्ष का ऐतिहासिक केन्द्र है, जहांके हिन्दू राजराजेश्वरों ने बहुत काल तक सारे भूमण्डल पर अपनी राज सत्ता चलाई थी और जो पीछे मुसलमानों की गुलामी में दाख़िल हुई, उसी दिल्ली में आज महोत्सव है!

महर्षि वाल्मीकि ने कहा है कि,-'जो वस्तु हुई है, उसका

अवश्य नाश होगा; जो खड़ी है, वह अवश्य गिरैगी; जो मिले हैं, वे अवश्य बिछुड़ैंगे; और जो जीते हैं, वे एक न एक दिन अवश्य मरेंगे।' यह सच है, संसार की गति पहिए की आर की भांति सदा ऊपर नीचे हुआ करती, अर्थात बदलती रहती है। इसी कारण से जो भारतवर्ष सदा से सारी पृथ्वी का मुकुटमणि बना था, जिसकी आन सारा संसार मानता था और जो विद्या, वीरता और लक्ष्मी का एकमात्र विश्रामस्थान था, वह आज दीन, हीन और मलीन होरहा है और हिन्दू राजराजेश्वरों की राजधानी [दिल्ली] यवन-पद-दलित होरही है; उसी दिल्ली में आज खूब धूमधाम मची हुई है!!!

जिस देहली का पुराना नाम हस्तिनापुर, या इन्द्रप्रस्थ था; जिसे राजराजेश्वर धर्मराज युधिष्ठिर ने अपनी राजधानी बनाया था; जहां पर तीस पीढ़ी तक युधिष्ठिर के वंशवालों ने राज्य किया था और फिर पांच सौ बरस तक जहां तक्षकवंश के लोगों का राज्य रहा; उसके बाद जहां पर गौतमवंश के पन्द्रह राजाओं ने राज किया और उनके पीछे जहां मयूरवंशवालों ने अपना पैर जमाया था; जहां पर मयूरवंश के पिछले राजा पाल को आज से दो हज़ार बरस पहिले उज्जयिनी के महाराजाधिराज विक्रमादित्य ने हराकर जिस [दिल्ली] को अपने आधीन किया था; पीछे तोमर वंश के दिल्लू या दिलीप नामक राजा ने आज से अठारह उन्नीससौ बरस पहिले जिसे अपनी राजधानी बनाया, जिससे उसका नाम 'दिल्ली' या 'देहली' पड़ा; इसके अनन्तर जो देहली सात आठ सौ बरस तक उजाड़ पड़ीरही और तोमर घराने के लोग कभी कभी उसपर अपना अधिकार जमाते रहे; फिर उनसे जिस देहली को चौहानों के प्रसिद्ध राजा विशालदेव ने [१] छीन अपनी राजधानी बनाया और फिर जो हिन्दुओं के सबसे पिछले स्वाधीन राजाधिराज पृथ्वीराज की राजधानी हुई; उसी दिल्ली–हिन्दुओं के प्राचीन गौरव की लीलाभूमि देहली–में आज बड़ा जलूस नज़र आ रहा है!!!

---

(१) इस विशालदेव या वीसलदेव का नाम, फ़ीरोज़शाह की लाटपर जो शिला-लेख है, उसमें खुदा हुआ है।

अन्त में जिस दिल्ली को ज़ालिम शहाबुद्दीन मुहम्मद ग़ोरी ने छलछंद रचकर पृथ्वीराज को जीत (सन् ११९३ ई० में) अपने अधिकार में किया और जिसका अधिकार अपने गुलाम क़ुतबुद्दीन ऐबक (२) को दिया था; और तब से जो दिल्ली-राजराजेश्वरों की लीलाभूमि देहली-गुलाम बादशाहों की गुलामी में दाख़िल हुई, उसी दिल्ली में आज बड़ी चहल पहल, और धूम मची हुई है !!!

तो यह कैसी धूम है ? सुनिए, कहते हैं,—

सन् १२०६ ई० के अक्तूबर मास में जब शहाबुद्दीन मारा गया और उसका भतीजा महमूद ग़ोरी ग़ज़नी के तख़्त पर बैठा, जिसकी बहिन हमीदा का निक़ाह क़ुतबुद्दीन के साथ पहिले ही हो चुका था, उसने हिन्दुस्तान की बादशाही का ख़िलत और ख़िताब अपने बहनोई क़ुतबुद्दीन ऐबक को भेजदिया, तबसे वह क़ुतबुद्दीन ऐबक (३) हिन्दुस्तान का,स्वाधीन और पहिला मुसलमान बादशाह कहलाया। केवल चार बरस और कई महीने राज करके जब अस्सी बरस का होकर वह एक दिन चौगान खेलते समय घोड़े से गिर कर मर गया तो उसका बेटा आरामशाह, जो हमीदा के पेट से पैदा हुआ था, दिल्ली के तख़्त पर बैठा।

यद्यपि क़ुतबुद्दीन के शाही हरम में बहुतसी लौंडियां थीं, किन्तु निक़ाह की हुई केवल महमूदग़ोरी की बहिन हमीदा ही थी।

---

(२) ऐबक तुर्की भाषा में उसे कहते हैं; जिसके हाथ की छोटी उंगली टूटी हो।

(३) किसी धनवान ने क़ुतबुद्दीन ऐबक को बचपन में नैशापुर में ग़ुलामी में मोल लिया था। फिर उसीने उसे अरबी फ़ारसी पढ़ाया। मालिक के मरने पर क़ुतबुद्दीन को एक सौदागर ने ख़रीदा और उसे शहाबुद्दीन की भेंट कर दिया। शहाबुद्दीन की उस (क़ुतबुद्दीन) गुलाम पर ऐसी कृपा हुई कि होते होते वह भारतवर्ष का बादशाह हुआ। ईश्वर की महिमा का कोई पार नहीं पा सकता कि जिस क़ुतबुद्दीन ने लड़कपन में नैशापुर के सौदागरों की गुलामी की, वह बुढ़ापे में हिन्दुस्तान के तख़्त पर मरा और इस देश में मुसलमानों के राज की जड़ का जमाने वाला हुआ।

उसने दो बच्चे जने थे, जिनमें एक लड़का था और दूसरी लड़की। लड़का तो यही आरामशाह था, जो क़ुतबुद्दीन के मरने पर दिल्ली के तख़्तपर बैठा, और लड़की, जिसका नाम क़ुसीदा था, क़ुतबुद्दीन के एक गुलाम शमसुद्दीन अलतिमश को ब्याही गई थी।

क़ुतबुद्दीन ऐबक ने शमसुद्दीन अलतिमश को किसी समय एक हज़ार रुपये पर मोल लिया और अरबी फ़ारसी पढ़ा लिखा कर बड़े प्यार से अपने पास रक्खा था और अपनी लड़की क़ुसीदा का निक़ाह भी उसके साथ करा दिया था। क्योंकि वह ग़ुलाम था, इसलिये गुलामों की क़द्र ख़ूब जानता था। सो जब उस (क़ुतबुद्दीन) के मरने पर उसका बेटा आरामशाह दिल्ली के तख़्त पर बैठा था; उस समय शमसुद्दीन अलतिमश बिहार का सूबेदार था। क़ुतबुद्दीन के मरने की ख़बर सुनते ही वह दिल्ली चला आया और मौक़ा ढूंढने लगा। बेचारा आरामशाह सालभर भी तख़्तपर बैठने न पाया था कि शमसुद्दीन अलतिमश ने उससे तख़्त छीन ताज बादशाही का अपने सिर पर रक्खा (सन् १२११ ई०) और फिर किसी ढब से उसे मरवा डाला।

शमसुद्दीन अलतिमश ने दिल्ली के तख़्तपर बैठ कर भली भांति राजकाज चलाया, बहुतेरे देशों को दिल्ली में मिलाया, अपना अच्छा दबदबा जमाया और लगभग पच्चीस छब्बीस बरस के राज्य किया। (१)

इसकी बेगम क़ुसीदा ने चार बच्चे जने थे, जिनमें तीन बेटे थे और चौथी बेटी। लड़कों में एक का नाम था रुकनुद्दीन फ़ीरोज़-शाह, दूसरे का मुइज़्ज़ुद्दीन बहराम, तीसरे का नासिरुद्दीन मह-मूद, तथा लड़की का नाम रज़ीया था, जो इस उपन्यास की प्रधान नायिका है और जिसके तख़्तपर बैठने का ही महोत्सव आज दिल्ली की अपूर्व शोभा दिखला रहा है!!! इसीसे कहते हैं कि दिल्ली में आज बड़ी धूम है!!!

मार्च, सन् १२३६ ई० में मुलतान में शमसुद्दीन अलतिमश जब परलोक सिधारा, तो उस समाचार को सुन, उसका बड़ा लड़का

(१) इसीके समय में तातारी मुग़लों के सर्दार चंगेज़ख़ां ने सिंधुपार के देशों में प्रलय का सा दुंद मचाया था।

रुकनुद्दीन फ़ीरोज़शाह दिल्ली के तख़्तपर बैठ गया, किन्तु वह रात दिन रंडी भडुओं के साथ गुलछर्रे उड़ाता, शराब पीता और तमाशबीनी में डूबा रहता था। राजकाज का भार इसने अपनी मां कुसीदा के हाथ में दे रक्खाथा। मां उसकी बड़ी ज़ालिम थी और राज काज को कुछ भी नहीं समझती थी। उसका परिणाम यह हुआ कि ख़ज़ाना धीरे धीरे लुटने और ख़ाली होने लगा। उधर, रज़ीया ने, जो बाप के साथ थी और बाप के मरने पर एक बड़ी फ़ौज के साथ दिल्ली को आती थी, जासूसों को भेज कर अपनी मां और भाई का हाल मालूम किया और शाही दर्बार के कई बड़े बड़े सर्दारों को अपनी ओर मिलाकर बड़ी दिलेरी के साथ दिल्ली पर चढ़ाई की और अपने भाई रुकनुद्दीन को, जो केवल सातही महीने तख़्तपर बैठने पाया था, तख़्त से उतार दिल्ली और बादशाही तख़्तपर अपना कब्ज़ा किया।

आज सन् १२३६ ई० की तीसरी नवम्बर का संध्याकाल है। कल (२ री नवम्बर) को रज़ीया अपने बड़े भाई से तख़्त छीन कर सुल्ताना बन चुकी है, आज उसका दूसरा दिन है; अर्थात आज ताजपोशी के जलसे का पहिला दिन है, इसीकी धूम सारे शहर में मची हुई है !!!

सोई कहते हैं कि दिल्ली महानगरी में आज बड़ी धूम मची हुई है। आज इस नगरी की सजावट का वारापार नहीं है। प्रत्येक गली, कूचे, सड़क, बाजार और राजपथ सुथरे, सँवारे और गुलाबजल से तर बतर होरहे हैं; शहर के छोटे से बड़े तक सभी उमंग में भरे, सज धज कर इधर उधर घूम रहे हैं; सारी नगरी में ऐसा कोई भी घर नहीं है, जो रंगा, पुता, सुथरा, सँवारा और सजा सजाया न हो और जिसके द्वार पर कदलीखंभ और बंदनवार के अलावे नौबत न बज रही हो। सारे शहर में दिवाली को मात करनेवाली रौशनी हो रही है, बाज़ार और दूकानें खूब सजी हुई हैं और साधारण जन पैदल तथा अमीर उमरा हाथी, घोड़े, रथ, पालकी और तामजाम पर इधर उधर घूम रहे हैं। बड़े बड़े अमीरों के मकानों और जहां तहां राजमार्ग में नाच, तमाशे और भांति भांति के खेल हो रहे हैं और भीड़ का कोई ठौर ठिकाना नहीं है। इतने पर भी कहीं किसी तरह का गोलमाल

नहीं होने पाता और नंगी तलवारों को खैंचे संतरी लोग बड़ी सावधानी से भीड़ चीरते और दंगा फ़साद नहीं होने देते हैं।

यह तो नगर का हाल हुआ, अब उधर आंख फेरिए, देखिए, आज राजप्रासाद ने कैसी अपूर्व श्रीधारण की है !!! आज असंख्य दीपमालिकाओं से शाही कोट जगमगा रहा है, प्रकाश इतना अधिक है कि वहां पहुँच कर लोगों को दिन का भ्रम होता है और राजलक्ष्मी की अलौकिक प्रभा सामने क्रीड़ा करती हुई प्रत्यक्ष दिखलाइ देती है। आज शाही कोट के सभी सिंहद्वार सर्व साधारण के आने जाने और दर्बार के जलूस देखने के लिये खोल दिए गए हैं और नंगी तलवारों को खैंचे, संतरी कत्तार बांधे खड़े, अपने अपने कामों पर मुस्तैद हैं। क़िले के बुर्जों पर तोपें चढ़ी हुई हैं और रह रह कर सुल्ताना रज़ीया बेगम के ताज़पोशी की सूचना सर्वसाधारण को अपनी घोर गर्जना से दे रही हैं।

बड़े भारी आलीशान दालान में 'दर्बारे आम' सजा गया है, जिसकी सजावट देख यही जी में आता है कि इतनी दौलत या ज़र जवाहिरात कारूं के ख़ज़ाने में भी होंगे या नहीं !!! हज़ारों सोने, चांदी के और जड़ाऊ झाड़ लटक रहे हैं, जिनमें बिल्लौरी फ़ानूस और हांड़ियों में काफूरी बत्तियां जल रही हैं। बहुमूल्य कालीन का फर्श बिछा हुआ है, उस पर दर्बार के सिरे पर एक सोने के चबूतरे के ऊपर जड़ाऊ सिंहासन बिछा है और बादशाहों की तरह क़बा और ताज पहिन कर सुल्ताना रज़ीया बेगम उस तख़्त पर पुरुषोचित दर्प से बिराजमान है। उसके पीछे सुन्दरता की खान पांच सौ बांदियां नंगी तलवारें लिये खड़ीं, अपनी चमक दमक से लोगों की आंखों में चकाचौंधी डाल रही हैं और तख़्त के दोनों बगल सुल्ताना की दो सहेलियां ज़र्दोज़ी पोशाक पहिरे, जवाहिरात से लकोदक़, जड़ाऊ कुर्सियों पर नंगी तलवारें लिये बैठी हैं। सिंहद्वार पर शहनाइयां बजरही हैं, बड़े बड़े राजकर्मचारी दर्बार में अपनी अपनी पदमर्यादा के अनुसार उचित स्थानों पर खड़े हैं और अमीर उमरा तथा सर्वसाधारण आआ कर शाही आदाब बजा लाते और सुल्ताना को मुबारकबाद देते हुए नज़र करते हैं।

सुल्ताना सभों का परिचय लेती है, सभों की मिज़ाजपुर्सी करती है, सभों की नज़र क़बूल करती है, सभों को अपने हाथ से

इतर, लाइची और पान देती है और सभों से मधुर सम्भाषण करती हुई जबानशीरीं से यों फ़र्माती है कि,—'साहब ! इस तख़्त या सल्तनत की पायदारी आप ही लोगों की मिहरबानी पर मौक़ूफ़ है ।'

निदान, उस दिन के दर्बार का जलसा बड़ी ख़ूबी के हाथ पूरा हुआ । दूसरे दिन तीसरे पहर के समय सुल्ताना की सवारी बड़े धूमधाम से शहर में निकली, जिसकी शोभा का अनुभव केवल वेही कर सकते हैं, जिन्होंने महाराज सप्तम एडवर्ड के राजसिंहासन पर बैठने के समय दिल्ली दर्बार में लाट कर्ज़न की सवारी का जलूस देखा होगा। तीसरे दिन नाच रंग का बाज़ार गर्म हुआ और शहर भर के जितने कत्थक, कलावँत, रंडियां, भांड, भगतिये थे, सभोंने अपने अपने गुणों के अनुसार इनाम पाया । योंहीं पंदरहियों तक एक न एक जलसे तमाशे हुआ किए, जिनमें से एक दिन के तमाशे का हाल हम आगे के परिच्छेद में लिखते हैं, जिससे पाठक लोग रज़ीया के स्वाधीन और पुरुषायित हृदय का कुछ कुछ परिचय अवश्य पावेंगे और यह भी समझ सकेंगे कि मुसलमानों में पर्दे की चाल जितनी बढ़ी चढ़ी है, रज़ीया उतना ही उसके विरुद्ध आचरण करती थी ।

———



दूसरा परिच्छेद.

शाही शौक।

" कोई फ़ित्नः बरपा हुआ चाहता है।
खुदाजाने अब क्या हुआ चाहता है॥
ख़बर है तुम्हे, क्या हुआ चाहता है।
तमाम आज क़िस्सा हुआ चाहता है॥"

किले के अन्दर, 'ज़मुर्रद महल' के सामने बड़े लंबे चौड़े मैदान में पशुयुद्ध और मल्लक्रीड़ा के लिये बहुतही सुहावनी रंगभूमि बनाई गई है। एक ओर तो 'ज़मुर्रद महल' की बारहदरी खूब ही सजी गई है और तीन ओर से घेरा देकर बहुत बड़ा मैदान घेर लिया गया है और बड़े बड़े खम्भे गाड़कर और उसे पाट कर देखनेवालों के बैठने के लिये सुन्दर स्थान बनाया गया है। जिसमें एक ओर प्रतिष्ठित पुरुषों के लिये, दूसरी ओर साधारण लोगों के लिये और तीसरी ओरवाला स्थान स्त्रियों के लिये बनाया गया है, और स्त्रियों वाले स्थान में चिलवन या पर्दे नहीं लगाए गए हैं, क्योंकि खुद बेगम साहिबा पर्दे की पाबन्द नहीं थीं।

रंगभूमि ध्वजा, पताका, तोरण, बन्दनवार, फूल, पत्तों और झाड़ फानूसों से ऐसी अच्छी सजी गई है, कि जिससे देखनेवालों का दिल हिन्दुस्तान की दौलत का अन्दाज़ा कभी नहीं कर सकता। नीचे अखाड़े की भूमि कमर कमर भर मिट्टी छानकर ऐसी मुलायम बनाई गई है कि जिसमें सौ हाथ ऊंची जगह से गिरने पर भी चोट न लगे।

बाड़े के तीनों ओर सजे हुए सवारों की कत्तारें खड़ी हैं और रंगभूमि के प्रवेशद्वार पर दो बड़े बड़े पिंजड़ों में भयानक सिंह और बड़ा मुटल्ला भैंसा बंद है।

धीरे धीरे देखनेवालों की भीड़ उमड़ी हुई चली आ रही है और प्रबन्ध करनेवाले, सभों को उनकी योग्यता के अनुसार उचित स्थानों पर बैठा रहे हैं। उन स्त्रियों के बैठाने के लिये, जो कि

बेगम साहिबा ही की तरह पर्दे के पाबन्द न थीं और तमाशा देखने के लिये आरही थीं, तातारी बांदियां नियत थीं, जो आई हुई स्त्रियों को उनकी प्रतिष्ठा के अनुसार उचित स्थानों पर बैठातीं और प्रबन्ध करती थीं ।

पहर दिन चढ़ते चढ़ते सारी रंगभूमि तमाशा देखनेवालों से भर गई, तब रंगभूमि के फाटक पर बहुतही सुरीली शहनाई, बजने लगी और क़िले की बुर्ज पर से तोपें दगने लगीं, जो जलसे में बेगम साहिबा के तशरीफ़ लाने की सूचना देती थीं ।

आध घंटे के अन्दर 'ज़मुर्रद महल' की बारहदरी में आकर रज़ीया बेगम जड़ाऊ तख़्त पर बैठ गई, उसके अगल बगल मखमली कुर्सियों पर उसकी दोनों सहेलियां बैठीं और सैकड़ों ख़ूबसूरत बांदियां नंगी तलवारें लिये हुईं बेगम साहिबा के पीछे आ खड़ी हुईं । आज बेगम और उसकी सहेलियां जनानी पोशाक में थीं; जिनके बैठने से परिस्तान का आलम नज़र आता था ।

बेगम साहिबा के आतेही सभी स्त्री पुरुषों ने अपने अपने स्थानों पर खड़े हो हो कर शाहानः सलाम किया और फिर इशारा पाकर सब अपनी अपनी जगह पर बैठ गए । लाख पचास हज़ार आदमी इकट्ठे थे, पर प्रबन्ध और दबदबे की यह ख़ूबी थी कि सूई गिरने का भी शब्द सुन पड़ता था और यह किसीकी भी सामर्थ्य न थी कि कोई किसी स्त्री की ओर ज़रा आंख उठा कर तो देखे ।

निदान, फिर तो शहनाई के बदले नगाड़े बजने लगे और अखाड़े के घिरे हुए तथा सूने मैदान में बड़े भारी डीलडौल का भैंसा छोड़ा गया । पिंजड़े से छूटते ही वह रंगभूमि को रौंदता, रँभाता, उछलता, कूदता और पैनी सींगों को नवाकर इधर उधर दौड़ता फिरता था । भीड़ में बिल्कुल सन्नाटा था, केवल ढक्के की कर्कश ध्वनि आकाश पाताल को एक किए देती थी । देखनेवालों की दृष्टि उस काल सरीखे भयानक भैंसे पर लगी हुई थी, इतने ही में कई दिनों का भूखा शेर पिंजड़े से छोड़ा गया और छूटते ही वह बड़े ज़ोर से गरज कर भैंसे पर लपका । भैंसे ने अपनी पैनी सींगों पर शेर को रोक, बात की बात में उसे ज़मीन में देमारा और तुरत सींगों से उसके पेट को फाड़ डाला । थोड़ी देर तक शेर तड़पता रहा, अन्त में वह मरगया और मज़दूरे उसकी लोथ को रंगभूमि

से उठा ले गए।

जब तक शेर तड़पता रहा, भैंसा उसके पासही खड़ा खड़ा उसे देखता रहा, पर जब भाला लिये हुए पचासों मज़दूर वहां पर पहुंच गए तो भैंसा अपनें पिंजड़े में चला गया और उन सभों के जातेही फिर रंगभूमि में आकर उपद्रव मचाने लगा। आधे घंटे तक उस ख़ूनी भैंसे ने ख़ूबही उत्पात मचाया, यहां तक कि देखने वालों को त्रास होने लगा; किन्तु बेगम साहिबा का इशारा पाकर नगाड़ों का बजना बन्द कराया गया और सन्नाटा होने पर सुल्ताना की एक ख़वासिन ने खड़े होकर यों कहा,—

"क्या इस मज़में में ऐसा भी कोई जवांमर्द शख़्स है, जो इस भैंसे के साथ लड़ सके और सुल्ताना बेगम साहिबा से मुंहमांगा इनाम लेवे ?"

बांदी के इन शब्दों ने, जो अवश्य बेगमसाहिबा के इच्छानुसार ही कहे गए थे, देखनेवालों के मन में खलबली डाल दी। आधे घंटे तक रंगभूमि में गहरा सन्नाटा छाया रहा, पर कोई मर्दबच्चा उस ख़ूनी भैंसे से जूझने के लिये रंगभूमि में न उतरा। यह देख फिर वही बांदी खड़ी हुई और उसने अपनी कड़ी और सुरीली आवाज़ में यों कहा,—

"तो क्या इस शाही जलसे में सभी नामर्द इकट्ठे हुए हैं और मर्दमी का दावा रखनेवाला कोई भी यहां पर मौजूद नहीं है ? सुल्ताना यह आख़िरी हुक्म देती हैं कि अगर कोई शख़्स इस भैंसे का मुकाबला करने लायक होतो वह फ़ौरन मैदान में आवे, वर्नः यह तमाशा ख़तम किया जावे। फ़क़त आध घंटे की मुहलत और दी जाती है, इसके दर्मियान अगर कोई शख़्स नज़र न आया तो यह तमाशा मौक़ूफ़ किया जावेगा। मगर जो शख़्स लड़कर इस भैंसे को मार डालेगा, उसे पांच सौ दीनारें बख़्शी जावेंगी।"

बांदी की इस बात ने रंगभूमि में एक नया रंग पैदा किया और एक देवसरीखे डीलडौलवाला सुन्दर युवक अपने कपड़े उतार और जांघिया पहिर कर हाथ में केवल एक हाथभर लंबा छुरा लिये हुए रंगभूमि में उतरा। उसके उतरते ही रंगभूमि में एकाएक बड़ा कोलाहल मच उठा; जो बड़ी कठिनाई सेथोड़ी देर में शान्त किया गया और सुलताना का इशारा पाकर फिर ढक्के बजने लगे।

रंगभूमि में उस वीर के उतरते ही सभों की दृष्टि उसी पर लग गई और सभी स्त्री पुरुष आपस में उसकी सुन्दरता पर तर्स खाकर थोड़ी ही देर में होनेवाली उसकी अकाल मत्यु पर अपना अपना खेद प्रगट करने लगे। उस बीर ने रंगभूमि में उतरते ही बेगम साहिबा की ओर सिर उठा कर और फिर झुककर सलाम किया और तब भैंसे के साथ लड़ाई छेड़ दी।

इस बात के लिखने में जितनी देर लगी है, वास्तव में वहां उतनी देर नहीं लगी थी और पलक गिरतेही उतना काम हो गया था। क्योंकि ज्योंहीं वह बीर रंगभूमि में उतरा त्योंहीं भैंसे ने उस पर अपना वार किया था; किन्तु उस वीर ने इतनी फुर्त्ती की कि बेगम की ओर देख कर सलाम भी किया और भैंसे के वार को भी रोका। फिर वह 'नर-पसु-युद्ध' होने लगा। जब तक वे दोनों आपस में लड़ते रहे, तबतक हम एक दूसरे हीं वृत्तान्त के लिखने में प्रवृत्त होते हैं।

रज़ीया के तख़्त के अगल बगल जो दो अत्यन्त सुन्दरी षोड़शी बालिकाएं कुर्सियों पर बैठी थीं, जिनके प्रत्येक अङ्ग पर मदन के साथ यौवन की चढ़ाई अपना अपूर्व रंग दर्सा रही थी; उन दोनों में से जो बेगम के दाहिनी ओर बैठी थी, शाही दर्बार के एक अमीर-उल्-उमरा की लड़की थी और दूसरी एक सर्दार की कन्या थी। दाहिने ओरवाली का नाम सौसन था और बाईं ओरवाली का गुलशन। वे दोनों रज़ीया की मुंहलगी सहेली थीं और दोनो ही पढ़ी लिखी, दस्तकारी में होशियार और क्वारी थीं।

जब रंगभूमि में वह युवक वीर आकर बिकराल भैंसासुर से लड़ने लगा तो सभी देखने वाले चकित दृष्टि से वह विचित्र दृश्य देखने लगे, किन्तु सभों के चित्त का जो भाव था, सौसन के जी का भाव उससे कुछ भिन्न और विलक्षण था। वह बहुत ही उत्साह भरी दृष्टि से टकटकी बांधकर उस वीर को नख से सिख तलक निहारने और मनही मन उस सुंदर युवक की पूजा करने लग गई। गुलशन के चित्त का भाव साधारण था, किन्तु रज़ीया के मन का भाव कैसे हलाहल से मिला हुआ और भयंकर था, इसका हाल फिर कभी लिखा जायगा।

रज़ीया ने बड़े चाव से कहा,—"क्यों, सौसन! यह तो कोई

अजीब शख़्स है!"

सौसन,—"बेशक, हुज़ूर! ऐसा जवांमर्द और ख़ूबसूरत जवान तो आज तलक देखने में नहीं आया था। अजब ख़ुदा की शान है कि उसने इस मर्दबच्चे में ख़ूबसूरती और जवांमर्दी कूट कूट कर भर दी है।"

गुलशन,—" ओफ़! इन्सान भी एक ख़ूंख़ार ज़बर्दस्त हैवान का मुकाबला इस उम्दगी के साथ कर सकता है, इसका कभी ख़्वाब भी मैने नहीं देखा था!"

रज़ीया,—"बेशक, यह ख़ूबरू जवांमर्द क़द्र करने के काबिल है।"

सौसन,—"जी हां, हुज़ूर इस शख़्श की जहां तक कद्र की जाय, थोड़ी होगी; मगर यह है कौन?"

रज़ीया,—" हां! इसे दर्याफ़्त करना चाहिए, मगर अभी नहीं, तमाशा ख़तम होने के बाद।"

गुलशन,—" और मैं ख़याल करती हूं कि यह बात उस वक्त बहुतही आसानी से जानी जा सकेगी, जब यह शख़्स बाद तमाशा ख़तम होने के हुज़ूर की ख़िदमत में इनाम लेने के वास्ते हाज़िर होगा।"

गुलशन की यह तुच्छ बात यद्यपि सौसन को बहुत ही बुरी लगी और उसने एकबार रज़ीया और गुलशन की ओर सिर उठा कर देखा भी; पर वे दोनों तमाशा देख रही थीं, जिनमें रज़ीया की आंखों से एक विचित्र प्रकार की ज्योति निकल रही थी और गुलशन की आंखों से आश्चर्य की झलक निकली पड़ती थी।

इतने ही में चारों ओर से, भीड़ में से, बड़ा कोलाहल मच उठा और "वाह वाह" की आवाज़ सुनाई पड़ने लगी; क्योंकि उस बीर ने लड़ते लड़ते, स्वयं बिना चोट खाए, उस भैंसे को अखाड़े में पछाड़ कर उसके पेट में कटार भोंक दी थी, जिससे वह हाथ पैर पटक रहा था। इस लड़ाई में पावघंटे से जियादे देर न लगी। युवक वीर ने अक्षत शरीर से उस पशु को मार वाह-वाही लूटी; फिर बेगम के इशारा करते ही बात की बात में भीड़में सन्नाटा छा गया और नगाड़े का बजना भी बन्द कराया गया।

विजयी वीर ने चारों ओर कृतज्ञता भरी दृष्टि से निहार कर बेगम की ओर देख, शाहानः सलाम किया और हाथ जोड़कर कहा,—

"अगर जनाब सुलताना साहिबा की इज़ाजत हो तो मैं किसी सिपाही के साथ तल्वार की लड़ाई लड़ सकता हूं।"

यह सुन रज़ीया ने अपनी उस लौंडी से कुछ कहा, जो पहिले दो दो बार बोल चुकी थी, सो उस लौंडी ने खड़े होकर यों बेगम साहिबा का हुक्म सुनाया,—

"अगर यहां पर कोई शख़्स तल्वार के फ़न में उस्ताद हो तो वह इस जवांमर्द सिपाही के मुकाबले के वास्ते अखाड़े में उतरे। इस लड़ाई के लिये दो तल्वारें काठ की दी जावेंगी, जिसमें किसीकी जान ख़तरे में न आवे; क्योंकि हुज़ूर बेगम साहिबा की यह दिली ख़्वाहिश है कि आज के तमाशे में किसी इन्सान की जान न जावे; चुनांचे जो शख़्स इस लड़ाई को जीतेगा, एक हज़ार दीनारें इनाम पावेगा।"

सुलताना की आज्ञा सुनते ही रंगभूमि के प्रबन्धकर्त्ता ने काठकी दो तल्वारें ला कर, उनमें से एक उस युवक वीर के हाथ में दी और दूसरी वहीं अखाड़े की भूमि में थोड़ी सी गाड़कर खड़ी कर दी। वीर युवक ने अपनी कटार का ख़ून पोंछकर उसे अपनी कमर में खोंस लिया और इधर उधर आंख दौड़ाकर वह इस बात का आसरा देखने लगा कि,—'अब कौन बहादुर तल्वार खेलने के वास्ते सामने आता है।' किन्तु जब पाव घंटे का समय बीत गया और कोई उसके सामने न आया, तो सुलताना की उसी बांदी ने, जो कई बार बोल चुकी थी, खड़ी हो, फिर तमाशा देखने वालों को कुछ कड़ी कड़ी, पर मीठी मीठी सुनाई, जिसे सुन एक ख़ूब मोटा ताज़ा जवान जांघिया चढ़ा कर अखाड़े में उतरा और सुलताना को सलाम कर के तल्वार उठा कर पैंतरा बदलने लगा।

रंगभूमि में पूरा सन्नाटा छाया हुआ था, सब चित्र लिखे से अपनी अपनी जगह पर बैठे हुए नकली तल्वार की लड़ाई निरख रहे थे और सभी का चित्त उस विचित्र तमाशे में उलझा हुआ था।

इस लड़ाई की बाज़ी भी हमारे पूर्वपरिचित युवक वीर ने मार ली और मुटल्ले जवान के किए कुछ भी न हुआ। यह लड़ाई लगभग आध घंटे के हुई, इतनी ही देर में युवा ने मोटेमल को पसीने पसीने कर दिया। वह मुटल्ला बार बार चोट खाता, पर अपनी

चोट किसी भांति भी युवक पर नहीं पहुंचा सकता था, इस लिये वह मारे क्रोध के अन्धा हो गया और घबराहट के मारे बराबर निशाना चूकता गया; किन्तु युवक वीर को न घबराहट थी, न क्रोध था, न थकावट थी और न अपने मुक़ाबले वालेसे किसी तरह की हिचक थी, इस लिये वह बड़ी सावधानी औरफुर्त्ती से मोटेमल के वार को रोकता, उसके वार का जवाब देता और मौके मौके पर उसके मोढ़े, कलाई और पीठ पर वार भी करता था। सो आधे घंटे के पूरे होते होते ही उसने मौका देख कर एक ऐसा हाथ मोटेमल की कलाई पर जमाया कि उसके हाथ की नली पहुंचे से टूट गई और वह तलमला कर अखाड़े में गिर पड़ा।

यह देख चारों ओर से 'वाह वाह' की आवाज़ सुनाई देने लगी। बीर युवक ने झुक कर बेगम साहिबा को सलाम किया और हाथ जोड़ कर यों निवेदन किया;—" जहांपनाह! गुलाम कुश्ती लड़ना भी जानता है, अगर हुज़ूर की इजाज़त होतो ताबेदार लड़ने के लिये तैयार है।"

उस वीर युवक की इस प्रार्थना को सुलताना ने बड़ी प्रसन्नता से स्वीकार किया और अपनी लौंडी के द्वारा यह आज्ञा प्रगट की कि,—" अगर कोई पहलवान यहां पर मौजूद हो तो वह इस जवां मर्द से कुश्ती लड़े। इस बाज़ी के मारने वाले को भी एक हज़ार अशर्फ़ियां इनाम दी जावेंगी।"

निदान, फिर तो एकही नहीं, बरन एक के पीछे दूसरे; योंहीं सोलह पहलवान अखाड़े में आए, पर दो दो चार चार मिनट में ही उन सभों ने ज़मीन देखी। अन्त में विजयी युवक वीर ने सुलताना को सलाम करके निवेदन किया कि,—"अगर यह गुलाम जहांपनाह का हुक्म पाए तो अपने एक शागिर्द के साथ सच्ची तलवार से पूरे एक घण्टे तक कुछ पटेबाजी का जौहर दिखलाए। इसमें खूबी यह होगी कि एक घण्टे तक लगातार लड़ने पर भी सच्ची तलवार मेरे या मेरे शागिर्द के बदन में ज़ख़्म हर्गिज़ नहीं पहुंचा सकेगी।"

यह एक ऐसी विचित्र बात थी कि जिसने सुलताना, उसकी सहेलियों और सभी देखने वालों के मन में गुदगुदी पैदा करदी। अन्त में सुलताना की आज्ञा पाकर उस युवकबीर ने अपने शागिर्द को पुकारा,—" अय, अजीज़, अयूब! ज़रा इधर तो आ।"

इतना सुनतेही अठारह उन्नीस बरस का एक परम सुन्दर पट्ठा अखाड़े में आया, आतेही उसने पहिले बेगम और अपने उस्ताद वीर युवक को सलाम किया। इतने ही में रंगभूमि के प्रवन्धकर्त्ता ने दो बहुतही अच्छी तलवारें ला दीं, जिनमें से एक उस युवक ने आपली और दूसरी अपने शागिर्द को दी।

हाथ में तलवार लेने भर की देर थी, फिर तो दोनों इस तरह पैंतरा बदलने, और वार करने लगे कि दोनों तलवारों का मण्डल सा बँध गया और उनकी चमक विजली की तरह चमकने लगी। देखनेवालों में बहुत थोड़े मनुष्य ऐसे थे, जिन्होंने ऐसा अजूबा खेल कभी देखा होगा!

रज़ीया ने इस कर्तब को देख, बहुतही खुश होकर कहा,—

"देख, सौसन! भई! सच बता; ऐसा अजीब तमाशा तूने कभी देखा था?"

सौसन,—"हुज़ूर! क़सम खुदा की, देखना तो दूर रहा, लौंडी ने कभी इसका ख़्वाब भी नहीं देखा था। माशाअल्लाह! क्या सफ़ाई है, कैसी ख़ूबी है कितनी फुर्त्तीहै, और किसक़द्र मश्शाकी है कि काबिल बयान नहीं।"

रज़ीया,—"बेशक, तू, सौसन! ख़ूब दिल लगाकर यह तमाशा देख रही है, जोकि तेरी बातों, और चेहरे से साफ़ ज़ाहिर होता है (गुलशन से) और तू, गुलशन! तू! इस तमाशे को कैसा समझती है?"

गुलशन,—"सुलताना! मैं क्या अर्ज़ करूं! इस जवांमर्द का शागिर्द तो-मआज़अल्लाह!——"

रज़ीया,—"ऐं! कहते कहते, तू रुक क्यों गई, गुलशन!"

गुलशन,—"हुज़ूर! यह शागिर्द तो उस्ताद से भी बढ़ा चढ़ा नज़र आता है।"

सौसन,—"वाह, बी! ख़ूब समझदारी ख़र्च की, यहां पर तुमने! लाहौलबलाक़ूअत! अजी, बी! कहां उस्ताद और कहां शागिर्द! तुम तो, बी! ज़मीन और आस्मान के कुलावे मिलाने लगीं!!!"

रज़ीया ने सौसन की बात से प्रसन्न होकर कहा,—"बेशक, सौसन! वाक़ई! तू निहायत अक़लमन्द औरत है। तूने यह बहुतही सही कहा कि,—'कहां उस्ताद और कहां शागिर्द!' फ़िल हक़ीक़त!

उस्ताद, उस्तादही है और शागिर्द, शागिर्दही । मगर हां ! इस बात को मैं ज़रूर क़बूल करती हूं कि अगर यहां पर कोई शख़्स इस जवांमर्द का मुक़ाबला कर सकता है तो फ़क़त इसका यह शागिर्द लौंडा ही कर सकता है।"

गुलशन,–"जीहां, हुज़ूर! मेरे कहने का भी मतलब फ़क़त इतनाही था, फ़र्क सिर्फ़ लफ़्ज़ों का था; मगर बी, सौसन तो बेतरह उलझ पड़ीं।"

रज़ीया,–"अच्छा, अच्छा, मेरी प्यारी; सहेली गुलशन! तू अपना जी छोटा न कर; मैं तेरी दिलशिकनी न होने दूंगी और तेरे ख़ातिरख़ाह इस लौंडे को भी इनाम दूंगी।"

गुलशन,–"हुज़ूर का बोल बाला होवे; क्यों जहांपनाह! इस शागिर्दबच्चे का नाम अयूब सुनने में आया था न!"

रज़ीया,–"बेशक, तुझे इसका नाम सही याद है।"

सौसन,–"अल्लाह! बी, गुलशन ने तो इस शख़्स का नाम तक बरज़बां कर रक्खा है, जिसकी कि ये तरफ़दार हुई हैं।"

गुलशन,–"तो इसमें मैंने क्या बुरा किया, दोस्त!"

सौसन,–"अजी, बी! यह नहीं; मेरे कहने का मतलब सिर्फ़ यही है कि जैसे तुमने उस्ताद और शागिर्द को बराबर का बना डाला है, वैसेही अगर नाम भी इन दोनो का क़रीब क़रीब एक सा होवे तो निहायत ही मौज़ू होगा।"

रज़ीया,–"यह जुमला तूने प्यारी, सौसन! बड़ा मज़ेदार कहा; चुनांचे मैं तुझी से पूछती हूं; भला, बतला तो सही कि अयूब के मुकाबले का नाम क्या हो सकता है!"

गुलशन,–"वल्लाह! हुज़ूर ने कैसा पेंचीला सवाल किया है! क्यों बी! सौसन इसे हल कर सकोगी न!!!"

सौसन,–(रज़ीया की ओर देखकर) "वल्लाह आलम! हुज़ूर ने क्या खूब फ़र्माया है! सुनिए, सुलताना! अयूब के जोड़ का नाम महबूब भी हो सकता है, याकूब भी हो सकता है और नजाने क्या क्या हो सकता है, मगर इतना, मैं ज़रूर अर्ज करूंगी कि–(रुककर) ऐ वाह, देखिए, हुज़ूर! वल्लाह; क्या ही हाथ की सफ़ाई और मश्शाकी है!!!"

इधर आपस में ये सब चुहल की बातें होती थीं कि इतने ही में

असली तल्वार की नकली लड़ाई समाप्त हुई और दोनों उस्ताद और शागिर्द ज़मीन में तल्वारें टेक कर आदाब बजा लाए।

निदान, तमाशा बंद कराया गया, सुलताना की आज्ञा के अनुसार उन दोनों उस्ताद और शागिर्द को हाथी पर चढ़ाकर सारे शहर में घुमाने की तैयारी होने लगी और जो कुछ भीड़-भाड़ इकट्ठी हुई थी, एक एक कर के क़िले से बाहर होने और बाहर सड़कों, मकानों, दूकानों और कोठों पर जाजाकर जमने लगी; क्योंकि सुलताना के आज्ञानुसार बिजयी युवक वीर की सवारी निकलनेवाली है। बात की बात में सारे शहर में इस बात की धूम मचगई और तमाशाई लोगों में से उस सवारी या उस वीरवर के देखने के लिये जिसने जहां जगह पाई, आ जमें। जो लोग क़िले में न जासके थे, या जिनकी योग्यता शाही तमाशे में शरीक होने योग्य न थी, वे बेचारे केवल उस बिजयी युवक वीर को देख कर ही संतोष कर लेने के लिये, जहां जगह पाई आ जमें थे।



तीसरा परिच्छेद.

गुलामी।

" दिल जले है ग़म से औ आंसू बहाना मना है।
लगरही है आग घर में औ बुझाना मना है॥
जिगर में है शोलः औ नालः उठाना मना है।
चाक पर है चाक औ मरहम लगाना मना है॥ "

(अख़्तर)

सूरज निकलने में अब थोड़ी ही देर है। पौ फटते ही चिड़ियाओं ने कैसा चहचहा मचा रक्खा है। अपने अपने घोसले से निकल, सब इधर उधर चराई के लिये जातीं और चहचहा कर मानों अपने अबोध बच्चों को ढाढ़स देती जाती हैं कि,—'मेरे प्यारे बच्चों! धीरज धरो, मैं तुम्हारे लिये चारा लाती हूं।' ठंढी ठंढी हवा चल रही है। यद्यपि कातिक का महीना बीतने पर है और जाड़े की ऋतु आ धमकी है, तौभी तड़के की ठंढी और सुगन्ध से सनी हवा जी की कली को खिलाने में कोई कोर कसर नहीं करती। वे कलियां, जो रातभर रगरलियां मना चुकी हैं, तड़का होते ही अभिसारिका नायिका की भांति अपना मुंह नीचा कर लज्जा से सिमटी जाती हैं; किन्तु जो रातभर बिरहिनी कुलबधू की भांति संकुचित और उदास रहीं, प्रातःकाल होते ही आगतपतिका की भांति फूली अङ्गों नहीं समातीं और खिलखिला उठी हैं। ऐसे समय में एक गांठगठीला, लंबे क़द का, गोरा और सुन्दर युवक, जिसकी अवस्था कदाचित बाईस बरस से अधिक न होगी, बादशाही बाग़ में क़सरत कर के अँगोछे से बदन का पसीना पोछता हुआ रबिश पर चहलक़दमी कर रहा और धीरे धीरे कुछ गुनगुना भी रहा है। इसका रंग गोरा, कद लंबा, बदन पोढ़ा और भरा हुआ, पेशानी चौड़ी, हाथ पैर सुडौल और बलिष्ठ, चेहरा कुछ लंबा, आंखें बड़ी और नुकीली, नाक सीधी सुडौल, कान सीप से

पतले ओठ, पतले और लाली लिये हुए। दांत मोती की लड़ी से साफ़ और सुडौल, मूछें सुन्दर और ऊपर को चढ़ी हुईं, दाढ़ी अभी निकली आती हुई, सिर के बाल घुंघराले, काले और पीठ तलक लटकते हुए थे।

टहलते टहलते वह युवक एक सुहावने सरोवर के तीर पहुंचा, जिसका घाट सुन्दर संगमर्मर से बना हुआ था और जिसमें जलचर पक्षी तैर रहे थे। सरोवर के चारो ओर चार अठपहली संगमर्मर की बुर्जियां बनी हुई थीं और चारोओर से आम के पेड़ों की कत्तार ने उस सरोवर को मानो एक सुहावने कुंज के अन्दर कर लिया था।

सरोवर के तीर बैठ कर उस युवक ने हाथ मुंह धोकर दो चार चुल्लू पानी पीया और पत्थर की सीढ़ी पर ताल देता हुआ आपही आप धीरे धीरे गाने लगा,—

" मक़दूर किसको हम्दे खुदाये जलील का।
इस जासे बे ज़बां है दहन कालो कील का॥
पानी में उसने राहबरी की कलाम की।
आतिश में वह हुआ चमन आरा ख़लील का॥
उसकी मदद से फ़ौज अबाबील ने किया।
लश्कर तबाह काबःप असहाब फ़ील का॥
पैदा किया वह इसने बशर औज बिन्ने उन्क।
पुल जिसके साके पासे बना रौद नील का॥
फिरता है उसके हुक्म से गरदूं य रात दिन।
चलता है यां अमल कोई ज़र्रे सक़ील का॥
बुलवाथा अपने दोस्त को उसने वहां, जहां।
मक़दूर पर ज़दन न हुआ ज़बरईल का।
क्या पाते कुनह जात को उसके कोई ज़फ़र।
वां अक़्ल का न दख़्ल न हर्गिज दलील का॥ (१)

फिर थोड़ी देर तक वह आंखें बंद किए न जाने किस किस ख़याल में उलझा रहा; पर फिर उठा और यों कहता हुआ वहां से चलपड़ा,—

" दुनियां में कुछ सिवाय रंजो महन न देखा।
कुंजे कफ़स में हमने रंगे चमन न देखा॥

(१) इस उपन्यास में उर्दू की कविताएं जहां आवें, वे उर्दू शायरों की बनाई हुई समझनी चाहिएं। (१) ज़फ़र।

बाग़े जहां का हमने बरसों किया तमाशा ।
शादाब फूल तुझसा ऐ गुलबदन न देखा ॥
अहले वतन जो छूटा तो हमसे ऐसे छूटा ।
गुरबत में आके हमने ख़्वाबे वतन न देखा ।"

वह युवक योंही उसासें लेता, आंसू की बूंदें टपकाता, हाथ मलता, बार बार ऊपर आकाश की ओर देखता और रबिश पर टहलता हुआ एक ओर जा रहा था कि इतने ही में एक नौजवान पट्ठा. जो हाथ पैर से तैयार, देखने में नख सिख से सुन्दर, सुडौल और गोरे रंग का था, एक ओर से आपहुंचा और पहिले युवक के आगे खड़ा हो, बोला,—" सलाम, उस्ताद !"

उस्ताद,—" खुश रह ! प्यारे अयूब ! आज तू कहां था ? तेरा रास्ता देखते देखते जब बहुत देर हो गई तो मैंने अकेले ही कसरत शुरू करदी ।"

अभी जो युवक आया था, उसका नाम अयूब था; उसने कहा,—" उस्ताद ! अलस्सुबह उठकर मैं इसी जानिब को आरहा था कि कानों में डुग्गी की आवाज़ गई । बस फिर क्या था ! आप जानते ही हैं कि मुझमें अभी लड़कपन भरा हुआ है, चुनांचे मैं उस ओर लपका, जिधर से डुग्गी की आवाज़ आई थी ।"

उस्ताद,—" ऐसा ! आख़िर वह किस बात की मनादी थी !"

अयूब,—"सुलताना रज़ीया बेगम कल ताजपोशी का एक बड़ा भारी दर्बार करेंगी, इस वास्ते हर ख़ासो आम को यह इज़ाजत दी गई है कि जिसका जी जाहे, क़िले के अन्दर आकर जशन देखे ।"

उस्ताद,—(ठंढी सांस भरकर) " ओफ़ ! उस पाक पर्वरदिगार की क्या शान है कि गुलाम का ख़ान्दान बादशाही करे और अमीर खान्दान गुलामी की जंजीर से मज़बूर किया जावे ।"

अयूब,—"बेशक, उस्ताद ! जब वह पिछला ज़माना याद आता है, कलेजे पर सांप लोट जाता है ; मगर सिवाय आह सर्द खैंचने के और कुछ चारा नहीं चलता । ख़ैर, उस अम्र को अब छोड़िए और देखिए,—आज से लगातार कई दिनों तलक जो जो खेल तमाशे होंगे, उनकी यह फ़ेहरिस्त है; इसके देखने से मालूम हो जायगा कि किस दिन कौनसा तमाशा होगा ।"

उस्ताद,—(फ़िहरिश्त ले कर) " यह तूने कहांसे पाई ?"

अयूब,—"उसी डुग्गी वाले के साथ बांटने के लिये यह खच्चरों पर लदी हुई थी।"

उस्ताद,—"अज़ीज, अयूब! तेरा दिल चाहे तो तू जाकर तमाशा देखआना। क्योंकि तू जानताही है कि मेरी तबीयत ही अब इस काबिल न रही कि जिसमें जलसे तमाशे का शौक बाक़ी रहा हो!"

अयूब,-"उस्ताद आपको मेरे सर की क़सम! इस तमाशे को तो आप ज़रूर देखिए।"

उस्ताद,-"अज़ीज! बस, ज़ियादः ज़िद न कर। ख़ैर,अगर तूने क़सम दिलाई है तो एक रोज़, सिर्फ एकहीरोज़,-जिस आख़िरी रोज़, शेर और भैंसे की लड़ाई होगी, मैं तेरा साथ दूंगा।"

अयूब,-"ख़ैर, उतनाही सही। ओफ़! दुनियां में यह ज़ुल्म!!! बुरा हो क़ाफ़िर मुग़ल चंगेज़ख़ां का; खुदा उसे ताक़यामत दोज़ख़ से नजात न बख़्शे! अफ़सोस, सदअफसोस!!!"

उस्ताद,-"अयूब! यह क्या बेवक़ूफ़ी है! आख़िर, इस क़दर बुरा भला कहने से हासिल क्या है! जब किस्मत बद आती है, तो किसीका कोई चारा नहीं चलता। वकौल शख़्से कि,—

"न तक़रीर से तहरीर से, तदबीर से हो,
हमतो कहते हैं ज़फर, जो के हो, तक़दीर से हो।"

अयूब,-"आपका फ़र्माना बजा है। किसीने क्या खूब कहा है कि,—

"होता है वही जो मंज़ूरे खुदा होता है।"

उस्ताद,-"ऐसाही है।"

अयूब,-"जब यह ऐसाही है और आप भी इसे क़बूल करते हैं तो फिर आप हरवक्त क्यों ग़मग़ीन रहा करते हैं और किसी जलसे तमाशे में शरीक़ नहीं होते?"

उस्ताद,-(हंसकर) "यह बहस बेबुनियाद है जब कि तबीयत का सारा जोश ही गर्दिश के सबब बुझ सा गया है तो फिर कुछ भी अच्छा नहीं लगता। पस, इससे यह कोई ज़रूरत नहीं है कि किसी शख़्स को कुछ बुरा भला कहा जाय। यह खुदा की शान है, उसकी मर्ज़ी है, इस वास्ते जिसमें उसकी रज़ा हो, इनसान को उसीमें राज़ी रहना चाहिए।"

अयूब,–" मगर इस बात का जवाब देना तो आप भूलही गए कि फिर जब खुदा की मर्ज़ीही से सब कुछ होता है तो आप हर वक्त ग़मग़ीन क्यों रहा करते हैं। क्या यह वही मसल हुई कि,–'खुदरां फ़ज़ीहत, दीग़रारां नसीहत!' क्यों! आप मुझे तो बराबर यों समझाया करते हैं कि जो कुछ बीत गया, उसके लिये नाहक अफ़सोस करके अपने तईं आप जलाना अच्छा नहीं; मगर फिर आप ऐसा क्यों करते हैं?"

उस्ताद,–" अज़ीज, अयूब! तेरा कहना बिल्कुल सही है, मगर सुन,—बात असल यह है कि जब दिल में किसी क़िस्म का ख़याल बँध जाता है, तब वह धीरे धीरे छुटते छुटतेही छूटता है। बेशक मैं अपने तईं बहुत ज़ब्त करता हूं, मगर फिर भी बाज़ वक्त तबीयत इस क़दर ख़राब हो जाती है कि क्या कहूं! ताहम मैं अपने तईं बहुत समझाया करता हूं और तेरी भी इसी लिये नसीहत करता हूँ कि जिसमें तेरा दिल बहला रहे और तू कोई ऐसा काम न कर बैठे जो सरासर नामुनासिब और अक्ल के बईद हो।"

अयूब,—"जी हां, उस्ताद! आपकी नसीहत का ही यह असर है कि अब तक मैं पागल होने से बचा हुआ हूं। अलाहाज़ उल्क़यात! यह तो फ़र्माइए कि कभी ऐसा दिन भी नसीब होगा कि किसी सूरत से (इधर उधर देखकर) इस गुलामी से छुटकारा मिलेगा?"

उस्ताद,–" बस, खुदा को याद कर। क्योंकि सिवाय उसकी मर्ज़ी के दुनियां का कोई कामही नहीं होता।"

अयूब,–" बेशक, मैं हर वक्त यादे खुदा में मशगूल रहा करता हूं, और एक यही बात ऐसी है कि जिसकी बजह से तबीयत बेचैन नहीं होने पाती। (कुछ सोचकर) क्यों, उस्ताद! क्या कोई ऐसी तदबीर भी हो सकती है कि शाही कुतुबख़ाने से पढ़ने के वास्ते किताबें दस्तयाब हुआ करें?"

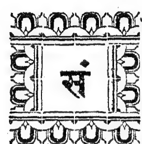
उस्ताद,—" मुमकिन है कि कभी न कभी इसकी कोई न कोई सूरत निकल ही आवेगी, पस, तावक्ते कि वैसा न हो, कुरान शरीफ़ कोही रात दिन देखा कर; उससे बढ़कर दुनियां में कोई दूसरी किताब नहीं है।"



चौथा परिच्छेद

तीन दिल, दिलदार दो।

"हर बशर को ख़ाक का पुतला न जानो ग़ाफ़िलो!
एकही सूरत मिली है, ख़ाक औ अकसीर को॥"
(ग़ाफ़िल)



संध्या होने में अभी दो घंटे की देर है, तो भी अभी से शाही बाग़ से सारे काम करनेवाले अपना अपना काम पूरा करके बाग़ से बाहर हो गए हैं। इसका कारण यह है कि रोज़ शाम के वक्त रज़ीया बेगम बाग़ की हवा ख़ाने तशरीफ़ लाती है। बाग़ शाही महल से मिला हुआ है और महल के चोर दर्वाज़े से बेगम या उसकी सहेलियां, जब चाहतीं बाग़ में आकर अठखेलियां करतीं और अपना जी बहलाती थीं। जिस समय महल की औरतें बाग़ में जाया चाहतीं, तुरंत बाग के माली बाहर कर दिए जाते और उसके अंदर सिवाय ख़ोजे और मालिनों के कोई मर्द मानस न रहने पाता। हां! उस समय बाग़ः के माली वहां अवश्य रहते और अपना काम करते, जब शाहीमहल की औरतें वहां पर नहीं रहती थीं। बाग़ बहुत लंबा, चौड़ा और सारे संसार के वृक्ष-लताओं से इस उत्तमता से सँवारा गया था कि देखते ही बन आता था। उसकी वे सुंदर क्यारियां, पार्चे, पौधे और दूब के तख़्ते, बावली, तालाब, लतामंडप, संगमर्मर की छोटी तथा बड़ी बड़ी बारहदरी और इमारतें, चिड़ियाख़ाना और पशुशाला आदि एक एक चीज़ ऐसी अनोखेपन और सुघड़ाई से बनाई गई थी कि जिसपर नज़र पड़ती, घंटों उसीकी हो रहती थी। सफ़ाई की यह ख़ूबी थी कि क्या मजाल, जो कहीं पर एक सरसों बराबर कंकड़ी, या एक पत्ती भी झरी हुई दिखलाई पड़े।

ऐसे समय में बेगम की वे दोनों सहेलियां, जिनका नाम सौसन और गुलशन था, हाथ में हाथ दिए हुईं, बाग की रविश पर चहल कदमी कर रही थीं। टहलते टहलते वे दोनों तालाब के किनारे

एक सुहावने दूब के तख़्ते पर बिछी हुई संगमर्मर की चौकी पर जा बैठीं और आपस में बातचीत करने लगीं,—

सौसन ने कहा,—" बी, गुल्शन ! सुना है कि कल उन दोनों बहादुरों की सवारी बड़ी शान शौकत के साथ शहर में निकली और तमाशाइयों का वह हजूम था कि जिसका इन्तेहा नहीं। अफ़सोस ! वह जलूस हम लोगों ने न देखा। "

गुलशन ने नाक सकोड़ कर कहा,—"लाहौलवलाकूवत ! भई ! तुम्हारी भी क्या तबीयत है ! अजी दोस्त ! अगर एक गुलाम की सवारी न देखो तो न सही। उसका जलूस ही क्या और देखना ही क्या। "

गुलशन की ये बातें सौसन को बहुत ही बुरी लगी और उसने भीतर ही भीतर ताव पेच खाकर कहा,—

" बी, गुल्शन ! यह तुम्हारा महज़ ग़लत ख़याल है ! क्या गुलामों को ख़ुदा ने किसी और हाथ या मसाले से बनाया है ! और क्या गुलाम इन्सान ही नहीं; गोया, तुम्हारे ख़याल से-निरा हैवान है ! ज़रा तो तुमने इस बात पर ग़ौर किया होता कि वह शख़्स, जिसका कि नाम अब मालूम हुआ है कि 'याक़ूब' है, कितना ख़ूबसूरत, जवांमर्द और दिलेर शख़्स है ! ! ! "

गुलशन,—"और उसका शागिर्द 'अयूब' ही ख़ूबसूरती और सिपहगरी में क्या कम है ? "

सौसन,—"बेशक ! वे दोनों ही एक से हैं, और ख़ूबसूरती व जवांमर्दी के बेजोड़ नमूने हैं; पस, ज़रा ग़ौर तो करो कि ऐसे शख़्स क्या गुलामी की ज़ंजीर से जकड़े रहने लायक हैं और क्या इनकी क़दर गुलामी में पड़े रहने से कभी हो सकती है ? "

गुलशन;—"इस बारे में मेरी राय, बी, सौसन ! तुम्हारी राय से इत्तिफ़ाक़ नहीं करती। वजह इसकी यह है कि मेरे ख़याल से फ़क़त ख़ूबरूई ही इन्सान को आलः दर्ज़े का नहीं बना सकती। मुमकिन है कि इन ख़ूबसूरत गुलामों के अन्दर भी वेही ख़ौफ़नाक चीज़ें भरी होंगी, जोकि बदसूरत हबशी गुलाम में पाई जाती हैं ! इस वास्ते अंदरूनी हालात के जाने बग़ैर, किसीकी-ज़ियादह-तर इन गुलामों की-बाहरी ख़ूबसूरती पर यकीन करना सरासर बेवक़ूफ़ी है। "

गुलशन की ये गर्व से भरी हुई बातें सरल-हृदया सुन्दरी सौसन को बहुतही कडुई लगीं, इसलिये उसने कुछ रूखेपन के साथ कहा,—

" तुम्हारा फ़र्माना बजा है, बी, गुलशन ! आज मैने यह बात बख़ूबी समझली कि तुम्हारे ऐसी ख़ूबरू नाज़नी दुनियां में किसी ग़ैर की ख़ूबसूरती या नज़ाकत की क़द्र हर्गिज़ नहीं कर सकती। मगर क्यों हज़रत ! जब कि बाहरी ख़ूबसूरती या चमक दमक से तुम इतनी नफ़रत करती हो तो बेशकीमत जवाहिर के टुकड़े में तुम तब तक हर्गिज़ हाथ न लगाती होगी, जबतक कि उसकी अन्दरूनी हालत से वाक़िफ़ न हो लेती होगी ! क्यों, यह तो ठीक हुआ न ! और सुनो तो सही, यह नर्गिस का फूल, जो तुम्हारे हाथ में है, जिसे कि तुमने अभी तोड़ा है, मेहबानी करके सच बतलाना कि क्या तुमने इसपर दिल चलाने या हाथ डालने के पेश्तर इसकी भीतरी हालत पर बख़ूबी ग़ौर कर लिया था ?"

गुलशन,-(सौसन के मुखड़े पर नज़र गड़ाकर) "अल्लाह ! अल्लाह ! ख़ैर तो है; बी, सौसन ! आज तो तुमने बेतरह मुझे कायल किया ! बेशक, तुम्हारी दलीलों ने मुझे आज लाजवाब कर दिया और अब यही जी चाहता है कि उस कोशिश में मैं अपने तईं भी क्यों न शरीक करदूं जो कि इन गुलामों को आज़ादी देने के वास्ते की जायं।"

सौसन;-(उठकर और गुलशन को गले लगा कर) "मेरी, दोस्त, गुलशन ! खुदा करे, उन बेचारों को जल्द आज़ादी नसीब हो और उसकी दस्तयाबी में तुम्हें नामबरी मिले।"

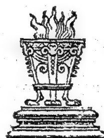
इतने ही में एकाएक रज़ीया वहीं पहुंच गई और उसने सौसन को गले लगा कर कहा,—

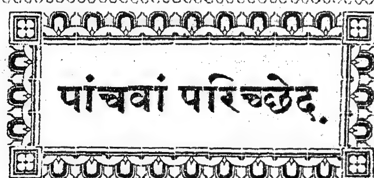
"सौसन ! इस वक्त मैं तेरी उन दलीलों से, जो कि तू गुलशन के साथ कर रही थी, निहायत खुश हुई हूं और खुदा चाहेगा तो बहुत जल्द मैं तेरी ख़ाहिश बमूजिब उन गुलामों को गुलामी से आज़ाद कर, शाही दर्बार में कोई अच्छा वहदा दूंगी, जिससे वे दोनों मेरी नेकनीयती, क़दरदानी, फ़ैय्याज़ी और ग़रीबपर्वरी को ताज़ीस्त न भूलेंगे।"

बेगम के इन वाक्यों ने सुंदरी सौसन के दिल के साथ वह

काम किया, जो अमृत मुर्दे के साथ करता है।

फिर रज़ीया बेगम ने कहा,—"सौसन ! इस बात की मुबारक-बादी तो मैं तुझे देही चुकी हूं कि,—'तेरे सोचने के मुताबिक उस जवांमर्द उस्ताद का नाम 'याकूब' ही निकला; मगर आज वजीर आज़म मुझे इस बात की पूरी ख़बर देगा कि 'दर असल, ये दोनों हैं कौन!' क्योंकि तेरी इस राय के साथ मैं भी इत्तिफ़ाक करती हूं कि,—' ऐसे खूबरू जवांमर्द ज़रूर किसी आली ख़ान्दान के होंगे, जिन्हें बदकिस्मती ने गुलामी की बेड़ी पहनाई होगी।"





पांचवां परिच्छेद.

इश्क का आग़ाज़।

"मकामे इश्क में शाहो गदा का एक रिश्ता है।
जलेखा हर गली कूचे में बेतौक़ीर फिरती है॥"
(ग़ाफ़िल)

उसी समय एक बांदी ने शाहानः आदाब बजा लाकर अर्ज़ किया कि जहांपनाह! वज़ीरआज़म दरे दौलत पर हाज़िर है और हुज़ूर की कदमबोसी हासिल किया चाहता है।"

इतना सुनतेही रज़ीया अपनी दोनों सहेलियों का हाथ पकड़े हुई बाग के एक सुहावने और सजे हुए कमरे में जाकर मसनद पर बैठ गई और लौंडी को हुक्म दिया कि,-" वज़ीर को यहीं हाज़िर कर।"

आज्ञा पाकर वज़ीर के बुलालाने के लिये लौंडी चली गई। बेगम के दहने बाएं, अदब से झुकी हुई, सौसन और गुलशन बैठी थीं, मसनद के पीछे तलवारें, चमर और पंखे लिए हुई बीस से अधिक ख़वासिनें खड़ी थीं, शमादान में काफूरी बत्तियां जल रहीथीं और सोने की अँगीठी में खुशबूदार मसाले जल रहे थे, जिनकी महक से सारा कमरा बसा हुआ था।

दोही मिनट के अन्दर वज़ीरआज़म 'खुर्शेदख़ां' कमरे के दरवाज़े पर पहुंचा और वहीं से जमीन चूमता और शाही आदाव बजा लाता हुआ कमरे के अन्दर पहुंच, बेगम की मसनद से बीस हाथ दूर दस्तबस्तः खड़ा होगया। रज़ीया ने उसकी ओर देखा और कुछ नज़दीक आने और बैठने का इशारा किया; जिसके अनुसार वह फिर जमीन तक झुक और फ़र्शी सलाम करके अदब के साथ दोज़ानू बैठ गया। थोड़ी देर तक कमरे में सन्नाटा छाया रहा, फिर रज़ीया ने पहिला सवाल जो उससे किया, वह यह था,—

" क्या भटिण्डे का क़िलेदार आया ?"

खुर्शेद,—" जी हां, जहांपनाह ! वह आज अलस्सुबह आया है, और जो कुछ इर्शाद हो, बसरोचश्म बजा लाने के वास्ते तैयार है ।"

रज़ीया,—" बेहतर ! तो अब मैं यह चाहती हूँ कि मेरी वाल्दः तीनों भाई, (१) उनकी बीबियां और लड़केबाले भटिण्डे के क़िले में कैद रहने के वास्ते भेज दिए जायं, और वहांके क़िलेदार-क्या नाम उसका ?"

खुर्शेद-" अल्तूनियां ।"

रज़ीया,—" हां, ठीक है, मैं भूलगई थी । ख़ैर तो उस तुर्की सर्दार अल्तूनियां को इस बात की सख़्त ताक़ीद कर दी जाय कि वह मेरी वाल्दः और बिरादरों की ख़ातिर्दारी में हर्गिज़ कमी न करे ; मगर, हां ! वे सब बतौर कैदी के शुमार न किए जाने पर भी आज़ाद न समझे जायं और उनकी बख़ूबी निगरानी की जाय; इसलिए कि सल्तनत में फिर किसी तरह के फ़साद बर्पा होने का दहशत न रहे ।"

खुर्शेद,-" जो इर्शाद !"

रज़ीया,-" मगर हां, अब इस बात को बख़ूबी ग़ौर कर लेना चाहिए कि इन लोगों को किस ढब से क़ैद कर के भटिण्डे के क़िले में भेजा जाय !"

खुर्शेद,-"जिस तर्कीब को हुज़ूर मुनासिब समझें !"

रज़ीया,—" यह नहीं; यह कार्रवाई क्यों कर ब आसानी की जा सकती है, इसमें तुम अपनी राय ज़ाहिर करो ।"

खुर्शेद,-(सिर खुजलाते खुजलाते) "हुज़ूर से अगर इस ग़ुलाम को एक हफ़्ते की मुहलत मिले तो ग़ुलाम ग़ौर करने बाद इस अम्र में अपनी नाचीज़ राय ज़ाहिर कर सकता है । "

रज़ीया,-"माज़ अल्लाह ! अजी इस ज़रा सी बात के वास्ते एक हफ़्ते का बेशक़ीमत वक्त फ़ज़ूल क्यों ज़ाया किया जाय ? मैं यह चाहती हूं कि इस बारे में जो कुछ करना है, वह अभी तय कर लिया जाय और इसके बाद अभी से उसकी कार्रवाई शुरू कर दी जाय ।"

(१) रुक्नुद्दीन, मुइज्ज़ुद्दीन, नासिरुद्दीन ।

खुर्शेद,-"हुजूर का फ़र्माना बजा है।"

रज़ीया,-"सिर्फ़ 'बजा है,'के कहने से काम नहीं चलेगा; इस पेंचीदः मामले में खूब ग़ौर करलेना चाहिए, जिसमें आइन्दः कोई फ़तूर न पैदा हो।"

खुर्शेद,-"दुरुस्त है; अगर इज़ाजत हो तो ताबेदार कुछ अर्ज़ करे।"

रज़ीया,-"वल्लाह ? अभी तलक तुम इज़ाजत के मुन्तज़िर हो! अजी,साहब ! जो कुछ कहना हो, दिल खोल कर कहो। अगर तुम्हारी राय क़ाबिल पसन्द हुई तो उसकी मैं क़दर करूंगी, वर न उस पर बहस करके कोई दूसरी राय क़ायम करूंगी; मगर जो कुछ करना है, उसे कल के लिये उठा न रक्खूंगी।"

खुर्शेद,-"दुरुस्त है; ख़ैर तो गुलाम की नाक़िस अक़्ल में यह आता है कि कल क़िलेदार अल्तूनियां लोगों के ज़ाहिर में शाही दर्बार से भटिण्डे को वापस कर दिया जाय, मगर पोशीदः तौर से उसे यह समझा दिया जाय कि वह कुछ थोड़ी सी फ़ौज के साथ किसी ठहराए हुए मक़ाम पर ठहरा रहे; इधर एक दिन मौक़ा देखकर शब को हुज़ूर के बिरादरान, जो कि यहां पर कैद हैं, बेहोश करके अल्तूनियां के नज़दीक रवानः कर दिए जायं। आगे जैसी हुज़ूर की मर्ज़ी।"

यह सुनकर थोड़ी देर तक रज़ीया कुछ सोचती रही; फिर उसने सिर उठाकर वज़ीर की ओर देखा और कहा,—

"बेशक, तुम्हारी राय क़ाबिल पसन्द है, मगर मैं यह चाहती हूं कि फ़क़त अपने बड़े भाई रुकनुद्दीन फ़ीरोज़शाह को अल्तूनियां की निगरानी में, भटिण्डे के क़िले में क़ैद रहने के वास्ते भेज दूं, और वह उसी तर्कीब से, जैसी कि तुमने अभी बतलाई है; और वाल्दः को मैं अपने रूबरू निहायतही ख़ातिरदारी के साथ रक्खूं। कुछ दिनों के बाद मुइज़्ज़ुद्दीन और नासिरुद्दीन, जो कि यहां पर बतौर नज़रबंद के रक्खे गए हैं, किसी दूसरे क़िलेदार की निगरानी में क़ैद रहने के वास्ते, कहीं पर भेजे जायंगे; क्योंकि मैं ऐसा नहीं चाहती कि मेरे कुल बिरादरान किसी एकही शख़्स के तहत में एकही जगह पर कैद किए जायं, जिसमें उन्हें आपस में मिलने, तरह तरह के मनसूबे बांधने, आज़ाद होने की फ़िक्र में लगे रहने

और फ़साद बर्पा करने का अच्छा मौक़ा मिले। फिर अल्तूनियां ही का क्या भरोसा है कि वह कभी अपनी नीयत मेरी जानिब से न फेरेगा और हमेशः ईमानदारी से काम अंज़ाम देता रहेगा! इस वास्ते मैं यह नहीं चाहती कि किसी एकही शख़्स के हाथ में अपने तईं आप फंसा दूं और बग़ावत करने का उसे ख़ासा मौका दूं।"

रज़ीया की इन दूरअन्देश बातों ने बज़ीर के होश दुरुस्त कर दिए और उससे सिवाय,—'बजा है, सही है, दुरुस्त है,—'इत्यादि वाक्यों के और कुछ भी क़हते न बन पड़ा। निदान, यह बात तय पाई और तब रज़ीया ने दूसरी बात छेड़ दी। उसने कहा,—

"उन दोनों गुलाम, याकूब और अयूब के बारे में क्या किया गया?"

खुर्शेद,—"हुज़ूर के हुक्म बमूजिब उन दोनों को शाही ख़ज़ाने से इनाम देदिए गए। गो, उन लोगों ने दबी ज़ुबान यह उज़्र पेश किया था कि,—'बंदा तो सुलताना बेगम साहिबा का गुलामही है, फिर बंदे ने कियाही क्या है, जिसके वास्ते इतनी दीनारें बख़्शी जाती हैं',—मगर उन दोनों को हुज़ूर के कहे मुताबिक इनाम देदिए गए। जिसकी यह रसीद है!"

यों कहकर वज़ीर ने उन दोनों गुलामों की रसीदें बेगम के सामने रखदीं, जिन्हें शमादान की रौशनी में देखकर उसने वज़ीर के हवाले किया और यों कहा,—

"और क्या यह भी दर्याफ़्त किया गया कि दर हक़ीक़त वे दोनों हैं कौन? क्योंकि उन दोनों के चेहरे से यह साफ़ ज़ाहिर होता है कि वे दोनों ज़रूर किसी आलीख़ान्दान के होंगे।"

खुर्शेद,—"जीहां, जहांपनाह! हुज़ूर का ख़याल बहुत ही सही है। इस बात के दर्याफ़्त करने पर पहिले तो वे दोनों घंटों तक रोया किए और कुछ न बोले; मगर फिर बहुत कुछ ढाढ़स देने पर उन लोगों ने अपना जो कुछ दर्दनाक किस्सा बयान किया, उसे हुज़ूर की ख़िदमत में अर्ज़ करता हूं,—

'याकूब और अयूब, जो कि आपस में उस्ताद और शागिर्द का रिश्ता रखते हैं, अपने को तातारी अमीरखान्दान में बतलाते हैं। अर्सा कई साल का हुआ कि डांकुओं के गरोह ने इनके यहां डांका डाला और इन दोनों को क़ैद कर किसी बुर्देफ़रोश के हाथ

बे[illegible]।) कुछ दिनों के बाद उस बुर्देफ़रोश का काफ़ला हिन्दुस्तान में आया और उस काफ़ले के सर्दार ने इन दोनों गुलामों को हजूर के वालिद साहिब की ख़िदमत में नज़र किया था। तब से ये दोनों शाही दर्बार में मौजूद हैं। ये दोनो अरबी और फ़ारसी में अच्छी लियाक़त रखते हैं और इन दोनों में से याक़ूब दारोगा अस्पख़ानः और उसका शागिर्द अयूब, उसका ताईद बनाया गया है।'

"यही इन गुलामों का क़िस्सा है, जो हुज़ूर की ख़िदमत में अर्ज़ किया गया।"

जबतक ख़ुर्शेद याक़ूब और अयूब के बारे में कहता रहा, उमंग भरे नेत्रों को उसपर गड़ाए हुई सौसन और गुलशन बड़े चाव के साथ उन बातों को सुनती रहीं, किन्तु रज़ीया ने अत्यन्त गंभीर भाव को धारण किया था, तौ भी उसकी बड़ी बड़ी और नुकीली आंखों से रह रह कर एक विचित्र ढंग की चमक निकली पड़ती थी। इन तीनों के अलावे वहां पर एक लौंडी भी ऐसी थी, कि जो सन्नाटा मारे हुई उन गुलामों की कहानी बड़े उत्साह के साथ सुनती रही।

गुलामों की कहानी पूरी होने पर बेगम ने ख़ुर्शेद को अपने हाथ से पान दिया और वह शाहानः आदाब बजा लाकर वहां से रुख़सत हुआ। वज़ीर के जानेपर बेगम ने उसी लौंडी की ओर देखकर, जिसने आज वजीर के आने की ख़बर दी थी और हुक्म पाकर उसे बुला भी लाई थी; कहा,—

"ज़ोहरा! गानेवालियों को हाज़िर कर।"

"जो हुक्म, हुज़ूर!" इतना कहकर ज़ोहरा वहांसे चली गई और रज़ीया ने सौसन की ओर देखकर कहा,—

"बी, सौसन! बगैर शराब के तो मज़ा बिलकुल किरकिरा हो रहा है।"

सौसन,—"जी हां, हज़ूर!"

फिर उसने बांदियों की ओर देखा और कई लौंडियों ने शराब से भरी याक़ूती सुराही, ज़मुर्रद के प्याले, आबख़ोरे, गज़क और मेवे की रकाबियां लाकर क़िते से चुन दीं। सौसन ने शराब से भर कर प्याला बेगम के मुंह से लगाया और उसे ख़ाली करके बेगम ने

अपनी उन दोनों सहेलियों–सौसन और गुलशन–के साथ कुछ थोड़ा बहुत नाश्ता किया। सौसन ने गुलशन को भी एक प्याला शराब का पिलाया, पर खुद् एक घूंट भी न पीया।

गानेवालियां अपने साज सामान से दुरुस्त होकर आ पहुंची और शाहानः आदाब बजा लाकर क़रीने से बैठ, गाने बजाने लगीं। ये सब कमसिन, खूबसूरत, नाज़ुकबदन और गाने बजाने के फ़न में पूरी उस्ताद थीं। ये औरतें ख़ारज़म की रहने वाली थीं, किन्तु बदकिस्मती या खुशकिस्मती से अब सुल्ताना रज़ीया बेगम के हरम की लौंडियां बनकर रहतीं और गाने बजाने, नाचने की तालीम पाकर वही काम किया करती थीं।

इनकी गिनती, जो इस समय बेगम के रूबरू कमरे में आकर बैठी हुई हैं, बीस के लगभग है और सभी के हाथ में कोई न कोई बाजा भी है। उनमें से एक ने, जो उन सभों में खूबसूरती, नज़ाकत और नाज़ नखरे में चढ़ी बढ़ी थी, अर्ज़ किया,–

"जहांपनाह! नाच शुरू किया जाय?"

रज़ीया,—"नहीं, फ़क़त बैठकी मुजरा हो।"

यह सुनकर उन सभों ने अपने मिले हुए साज की फ़िर से जांच की और इस ग़ज़ल को गाना शुरू किया,—

"बता दें, हम तुम्हारे आरिज़ो काकुल को क्या समझें।
उसे हम सांप समझें, और इसे मन सांप का समझें॥
य क्या तशबीः है बेहूदः य क्यों मूज़ी से निसबत दें।
उसे वर्क़, और इसे सावन की हम कारी घटा समझें॥
घटा औ वर्क़ क्या है, क्यों घटा कर इनकी निसबत दें।
उसे वर्गे समन, और इसको सुंबुल की जटा समझें॥
नबाताते ज़मीं से इनको क्या निसबत मआज़ अल्लाह।
हुमा आरिज़ को, औ काकुल को हम ज़ुल्ले हुमा समझें॥
ग़लतही हो गई तशबीह यह भी एक तायर से।
उसे ज़ुलमात, इसको चश्मए आबेबक़ा समझें॥
जो कहिए, यह फ़क़त मक़सूद थी खूसरो सिकन्दर के।
यदेबैज़ा उसे, और इसको मूसा का असा समझें॥
अगर यह भी पसन्दे ख़ातिरे बाला न आवे तो।
उसे वक्ते नमाजे सुबह, और इसको अशा समझें॥

जो इन तशबीहों से भी दाग़ उन दोनों में आता हो।
उसे कन्दीले काबः, इसको काबः की रदा समझें॥
हक़ीर इन सारी तशबीहों को रद करके य कहते हैं।
सवैदा उसको समझें, और इसे नूरे ख़ुदा समझें॥ (१)

इस ग़ज़ल को उस नाज़नी ने इस ख़ूबी के साथ गाया कि सारी महफ़िल फड़क उठी और बेगम ने उसे इनाम देकर सभोंको रुख़सत किया। फिर सौसन की ओर देखकर कहा,—

"क्यों बी, सौसन! आज तेरा चेहरा इतना उतरा हुआ क्यों नज़र आता है?"

सच मुच सौसन के चेहरे पर उस समय उदासी की छाया पड़ी हुई थी, और रह रह कर न जाने क्यों, भीतर ही भीतर वह तलमला उठती थी, किन्तु बेगम की बात से वह चिहुंक उठी और अपने भाव को मनही मन दबाकर तुरंत उसने जवाब दिया,—

"जी, नहीं, हुज़ूर! इस ग़ज़ल की बंदिश ने मेरे दिल को उलझा लिया था।"

रज़ीया,—"तो क्या आज तू कुछ न गावेगी?"

"क्यों नहीं, हुज़ूर!" यों कहकर सौसन ने बीन उठाली और गुलशन बायां बजाने लगी। पहिले तो उसने हम्मीर रागनी को बहुतही अच्छी तरह से बीन के द्वारा अदा किया, फिर वह ग़ज़ल गाने लगी,—

" जब न था कुछ इश्क, हाले यार क्या मालूम था।
मज़हरे तौहीदे हक़ रुख़सार क्या मालूम था॥
हम समझते थे कि होंगे वस्ल में तुमपर निसार।
जान लेगी हसरते दीदार क्या मालूम था॥
पहले आसाँ जानते थे आपकी उलफ़त को हम।
ज़िन्दगी हो जायगी दुश्वार क्या मालूम था॥
नकद दिल को लेके आ निकले थे एक उम्मीद पर।
लाओबाली है तेरी सरकार, क्या मालूम था॥
क्या ख़बर थी मुझको अपने बस में करलेंगे हुज़ूर।
और भी हो जाएंगे बेज़ार क्या मालूम था॥
हम अभी से कह रहे हैं, इश्क में जाती है जान।

(१) हक़ीर।

फिर न कहना ओ बुते ऐय्यार क्या मालूम था ॥
यह ख़बर होती तो उसको दिल न देते ऐ वहीद।
कौल से फिर जायगा वह यार क्या मालूम था ॥"(१)

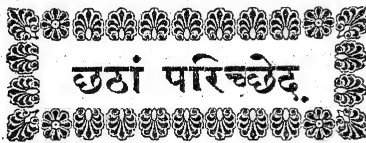
इसके बाद गुलशन ने बीन लेकर गाना शुरू किया और सौसन बांया बजाने लगी,—

"इश्क क्या शै है, किसी कामिल से पूछा चाहिए।
किस तरह जाता है दिल, बेदिल से पूछा चाहिए ॥
क्या तड़पने में मज़ा है. कत्ल हो प्यारे के हाथ।
उसकी लज़्ज़त को किसी बिस्मल से पूछा चाहिए ॥
जिसने उसका ज़ख़्म खाया है, उसे मालूम है ;
तेग़े अबरू की सिफत घायल से पूछा चाहिए ॥
यार के मिलने की तो कोइ तद्द्बिर बन आती नहीं।
तरह मिलने की किसी वासिल से पूछा चाहिए ॥
आहो नाले की हक़ीक़त देखता हूं हिज्र में।
क्या गुज़रती होगी, ताबां दिल से पूछा चाहिए ॥" (२)

निदान, यौंहीं दस बजे रात तक गाने, बजाने और शराब, कबाब का बाज़ार गर्म रहा, फिर रज़ीया उस जलसे को बर्ख़ास्त करके उठी और अपने महल में जाकर ख़ाना खाने बाद मखमली पलंग पर सो रही। उसकी पलंग के दोनो ओर अपनी अपनी पलंग पर सौसन और गुलशन सोईं और बीस से अधिक बांदियां नंगी तलवारें लिये बेगम और उसकी सहेलियों के पलंग के चारों ओर पहरे पर मुस्तैद रहीं। यों, जब दो घंटे बीत जाते तो उतनी ही दूसरी खवासिनें उस ख़ावगाह में आकर पहरे पर मुस्तैद होतीं और पहिली बांदियां छुट्टी पाकर वहांसे चली जाकर आराम करती थीं; यह प्रति दिन का नियम था।

आज रज़ीया, सौसन और गुलशन अपने अपने पलंग पर पड़ी तो दिखलाई देती हैं, पर यह नहीं जान पड़ता कि ये नींद में सोई भी हैं; इसलिये कि ये बार बार करवटें बदलती हैं, जिससे इनकी बेकली साफ़ ज़ाहिर होती है, पर ऐसा क्यों हो रहा है, या इसका कारण क्या है, यह बात आगे आपही खुल जायगी, अभी पाठक धीरज रक्खें।

(१) वहीद। (२) ताबां।



छठां परिच्छेद.

दंगा, फ़साद।

"न पूछो, हम सफ़ीरो ! क्या हुई वह अपनी आज़ादी ॥
गिरफ़्तारे बला जब से हैं बरगश्ता ज़माना है ॥
न उम्मीदे रिहाई है, न है परवाज़ की ताक़त।
हमारे मुश्तपरका अब क़फ़स में आशियाना है ॥"

(सफ़ीर)

तीसरे पहर के समय पुरानी दिल्ली (१) के बाज़ारों में तीन मुसलमान फ़क़ीर भीख मागते दिखलाई दे रहे हैं। उनमें एक नाटे क़द का बुड्ढा फ़क़ीर है और दो मझोले क़द के नौजवान फ़क़ीर हैं। तीनों की सूरत शकल में यद्यपि कुछ फ़रक है, पर बुड्ढे के चेहरे से एक तरह के रोब की झलक निकली पड़ती है, और उसके दोनों शागिर्दों के मुखड़े से सीधेपन के साथ भोलापन टपका पड़ता है। तीनों ठिहुनी तक नीले रंग का कुर्त्ता और गले में ढेर की ढेर कांच की मनियां पहिरे हुए हैं और तीनों ही के हाथ में तसवी है। बुड्ढे के सफ़ेद बाल कंधेपर पड़ेहुए हैं और दोनो नौजवान फ़क़ीर के काले काले घूंघुराले बाल कमर तलक लटक रहे हैं। वे तीनो न तो किसीसे कुछ बात चीत करते हैं और न किसीके सामने अड़ कर कुछ मांगते ही हैं, पर हर गली कूंचे और बाज़ार में यों आवाज़ लगाते फिरते हैं,—

बुड्ढा.—"मौला, तुझको बेटा देवे, दे खुदा की राह में।"
एक नौजवान,–"बाबा, तेरा बच्चा जीए, दे खुदा की राह में।"
दूसरा नौजवान,– 'अल्ला, तेरा बेटा जीए, दे खुदा की राह में।"

यद्यपि तीनों की आवाज़ सुरीली थी, पर उन दोनों नौजवानों की आवाज की अपेक्षा बुड्ढे की आवाज़ में रूखेपन के साथ कुछ

(१) कुतुब की लाट के पास, बसी थी, जहां पर मना के एक नाले के किनारे गुलाम बादशाह कुतबुद्दीन ऐबक का बनवाया हुआ क़िला था।

कड़ापन भी मिला हुआ था। योंही वे तीनों आवाज़ लड़ाते और घूमते घूमते, बाज़ार और गली कूचे में होते हुए, कुछ दूर एक मैदान में जा पहुंचे, जहां पर एक देवमन्दिर था और उसके बंद फाटक पर सैकड़ों मुसल्मान हथियार लिये हुए मन्दिर के फाटक को तोड़ते और 'अली, अली' का शोर गुल मचा रहे थे। मंदिर की छत पर बहुत से हिन्दू खड़े थे और मुसलमानों की आर्ज़ू मिन्नत कर रहे और गिड़गिड़ा कर बार बार यों कह रहे थे कि,—"भाइयों! आपलोगों ने हम निरपराधियों के मारने और मंदिर में घुस आने पर क्यों कमर बांधी है? हमलोगों का क्या अपराध है, हमलोगों ने या इस मन्दिर ने आपलोगों का क्या बिगाड़ा है?"

पर इसके जवाब में मुसलमान लोग केवल बेतुकी गालियां देते और मंदिर के मज़बूत फाटक पर धड़ाधड़ कुल्हाड़ी मारते थे। तीनो फ़क़ीर भी वहीं पहुंच गए और दोनो नौजवान फ़क़ीरों को एक किनारे ठहरा कर बुड्ढा फ़क़ीर भीड़ चीरकर मंदिर के दर्वाज़े तक जा पहुंचा और इस ढब से किवाडे में पीठ लगा कर खड़ा हो गया कि अब कुल्हाड़ी का मारना रुक गया और कई मुसल्मानों ने झल्ला कर कहा,—

"क्यों बे! फ़क़ीर की दुम! तुझे यहां किसने बुलाया है? चल, हट; दूर हो यहांसे,! अपना रास्ता पकड़!"

किन्तु बुड्ढे ने झिड़की की कुछ भी पर्वा न की और मुस्कुरा कर कहा,—"या इलाही! अब ये दिन आ गए कि अपनी क़ौमही अपनी दुश्मन बन कर गालियां देने लगी!— अफ़सोस!!! क्या दीन इस्लाम की क़ौमी मिल्लत इस दर्ज़े को पंहुच गई? या रब, तूही मालिक है।"

ऊपर कहे हुए वाक्य उस बुड्ढे फ़क़ीर ने ऐसे ढंग से कहे कि जिन मुसलमानों ने उसे गालियां दी थीं, वे कुछ नर्म हुए और कई मुसलमान उसके सामने खड़े हो, सवाल पर सवाल करने लगे,—

"आप कहां रहते हैं?"—"यहां पर क्यों आए हैं?"—"हमलोगों के काम में क्यों ख़लल पहुंचाते हैं?"—"मुसलमान होकर एक क़ाफ़िर के बुतख़ाने के ढाह देने से आप क्यों रोकते हैं?"—"क़ाफ़िरों का मारना या उन्हें दीन इस्लाम में लाना शरा के बमूजिम जायज़ है, फिर आप क्यों इस काम में दस्तअंदाज़ी करते

हैं ?" इत्यादि इत्यादि।

इसी प्रकार के सैकड़ों प्रश्नों को सुनकर बुड्ढे फ़क़ीर ने कहा,--"भला, मिहरबानी करके आपलोग यह तो बतलाएं कि आप लोग इस बुतख़ाने की क्यों बर्बादी किया चाहते हैं ?"

एक मुसलमान,--" फ़लां, मसजिद में किसी बदमाश हिन्दू ने सूवर का गोश्त फेंका है।"

बुड्ढा फ़क़ीर,--" किसी हिन्दू ने (!) सूवर का गोश्त (!) अच्छा, इसका क्या सुबूत है कि वह गोश्त सूवर का होगा ?"

दूसरा मुसलमान,--" सिवाय, उस गोश्त के और दूसरा गोश्त मसजिद में क्यों फेंका जायगा ?"

बुड्ढा फ़क़ीर,--"यह कोई माकूल जवाब नहीं है। फिर आप फ़र्माते हैं कि,--" किसी हिन्दू ने फेंका" अच्छा, आप लोगों ने किसी हिन्दू को गोश्त फेंकते देखा है ?"

तीसरा मुसलमान,--"देखा नहीं तो क्या हुआ, सिवाय हिन्दू के और ऐसी शरारत कौन करेगा ?"

बुड्ढा फ़क़ीर,--" यह सरासर आपलोगों की ज़ियादती है। पहिले तो इसी बात का आपलोगों के पास कोई सुबूत नहीं है कि वह गोश्त सूवर का ही होगा; तिस पर तुर्रा यह कि किसी ने किसी हिन्दू को उसे फेंकते भी नहीं देखा है। ऐसी हालत में यह सरासर ज़ुल्म नहीं तो क्या है ?"

चौथा मुसलमान,--" शाह साहब, क़सम कुरान की, मैंने एक हिन्दू को वह गोश्त फेंकते अपनी आंखों से देखा है, जो दरहक़ीक़त सूवर का ही होगा।"

बुड्ढा फ़क़ीर,--" लाहौलबलाक़ूवत ! यह दूसरी बंदिश निकाली गई ! ख़ैर मानलेता हूं कि किसी नालायक हिन्दू ने ऐसी शरारत की होगी; फिर इसकी क्या ज़रूरत है कि आपलोग इस बुतख़ाने के नेस्तनाबूद कर डालने पर कमर बांधें और इसके अन्दर जो बेचारे हिन्दू मिलें, उनकी जानें लेने पर आमादा हों।"

पांचवां मुसलमान,--"जनाब ! मसजिद के नापाक करने का बदला इस बुतख़ाने के ढाह देने और इसके अन्दर जितने हिन्दू हों, सभों के कत्ल कर डालने या मुसलमान बना लेने से ही चुकाया जा सकता है।"

बुड्ढा फ़क़ीर,—"तौबः, तौबः! यह ज़ुल्म है, पाक कुरान शरीफ की ऐसी मनशा हर्गिज़ नहीं है। बखुदा, आपलोग ज़रा रहम को जगह दें, इस बुड्ढे की बात मानें और ज़ुल्म से हाथ खैंचें।"

कई मुसलमान,–(ज़ोर से चिल्लाकर) "हर्गिज़ नहीं, हर्गिज़ नहीं; तू बुड्ढे! अगर अपनी बिहतरी चाहता है तो फ़ौरन यहां से हट जा, वर न तू भी क़ाफ़िरों में शुमार किया जाकर मारा जायगा।"

बुड्ढा फ़क़ीर,—"भाइयों! अगर हमारे मार डालने से तुम्हारी कुछ बिहतरी होती हो तो, आओ, लो, यह सर हाज़िर है; मगर यों तो जबतक दम में दम है, हम इस ज़ुल्म के करने से तुम लोगों को ज़रूर रोकेंगे।"

एक मुसलमान,—"मालूम होता है कि तेरी शामत आई है।"

बुड्ढे ने खड़े होकर इधर उधर नज़र दौड़ा कर देखा और यों कहा,—"अगर ऐसाही है तो तुमलोग बेगम साहिबा के रूबरू शरीर हिन्दुओं पर नालिश क्यों नहीं करते?"

दूसरा मुसलमान,—"हमलोग अपना फ़ैसला आप करते हैं, किसी बेगम या बादशाह की पर्वा नहीं करते; यह बुज़दिल हिन्दुओं का ही काम है, कि जो दूसरों पर अपनी किस्मत के फ़ैसले का भरोसा रखते हैं, इसलिये उनका जहां जी चाहे, हमारे बखिलाफ़ नालिश फ़र्याद किया करें।"

बुड्ढा फ़क़ीर,—"तो क्या, तुमलोग अपने को सुल्ताना रज़ीया बेगम की रियाया नहीं समझते?"

तीसरा मुसलमान,—"चाहे रज़ीया हो, या रुस्तम जो हमारे दीन इस्लाम के जोश में ख़लल पहुंचाए, उस क़ाफ़िर को हम लोग कुछ भी पर्वा नहीं करते, बलिक उसका मार डालना ही बिहतर समझते हैं।"

बुड्ढा फ़क़ीर,—"तब तो तुमलोग ख़ासे क़ाफ़िर हो और नाहक 'दीन, दीन' का शोर मचाकर पाक इसलाम मज़हब के वसूलों पर दाग़ लगाते हो।"

बुड्ढा फ़क़ीर इतनाही कहने पाया था कि मुसलमानों ने बड़ा शोर मचाना प्रारम्भ किया; वे सब बेचारे बुड्ढे के मार

डालने पर उतारू होगए थे कि इतने ही में एक हज़ार शाही सिपाहियों ने उन आततायियों को आकर घेर लिया और थोड़ी सी मार काट के बाद उन सबके सब फ़सादियों को गिरफ़्तार करके जेलख़ाने की राह ली। बात की बात में मैदान साफ़ होगया और वहां पर सिवाय उन तीनों फ़क़ीरों के और कोई न रह गया। क्यों कि उस मैदान में फ़सादी मुसलमानों के अलावे एक भी हिन्दू न था।

बदमाशों के गिरफ़्तार होकर जाने के साथही मन्दिर का सदर फाटक खुला और भीतर से कई ब्राह्मण निकल, उस बुड्ढे फ़क़ीर को झुक झुक कर सलाम करने और असीस देने लगे। बुड्ढे ने सलाम का जवाब देकर बड़ी नर्मी के साथ एक ब्राह्मण से पूछा,—

"पंडतजी! आपका नाम क्या है?"

ब्राह्मण,—"हरिहरशर्म्मा।"

बुड्ढा फ़क़ीर,—"क्या आप मिहरबानी करके यह बतलाएंगे कि दर असल, इस फ़साद की जड़ क्या है?"

हरिहर,—"जनाब, शाहसाहब! क्या आप मेरे कहने पर विश्वास करेंगे?"

बुड्ढा फ़क़ीर,—"बेशक, आपकी बातों पर मैं यकीन करूंगा, क्योंकि यह बात मैं बख़ूबी जानता हूं कि हिन्दू कौम से बढ़कर दुनियां में सच बोलने वाली दूसरी ज़ात नहीं है। इस कौम जैसी हमदर्दी, दियानतदारी, गरीबपर्वरी, फ़र्मांबर्दारी और पाकरूई दुनियां के पर्दे पर किसी दूसरी ज़ात में हई नहीं। आप किसी बात का अंदेशा न करें और जो कुछ सच्चा हाल हो, दिल खोलकर बेख़ौफ कहें।"

हरिहर,—"अहा! हज़्रत आप जैसे बुद्धिमान और उदार-हृदय महापुरुष, मुसलमान जाति में कितने होंगे? अहा! आपके हमलोग आजन्म कृतज्ञ रहेंगे, इसलिये कि केवल आज आपही के कारण इस मन्दिर का अस्तित्व और हम लोगों का प्राण बचगया नहीं तो सत्यानाश होने में बिलम्बही क्या था?"

बुड्ढा फ़क़ीर,—"जनाब! यह सब उसी पाक पर्वरदिगार का मिहर है; इन्सान की क्या ताक़त कि उसकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ कुछ कर सके।"

हरिहर,-" अच्छा तो सुनिए,- उत्पातियों ने जो यह दोष लगाया था कि,-' किसी शख़्स ने फ़लां मसजिद में सूवर का गोश्त फेंका है;' यह बात बिल्कुल झूठ और बेजड़ है। आप इस बात को सच मानें कि जो सच मुच हिन्दू होगा, वह कभी किसी भी विभिन्न धर्मावलम्बी के उपासनागार में उनके धर्म के विरुद्ध किसी अपवित्र वस्तु को न फेंकेगा। मुसलमान, हिन्दुओं के साथ जैसा वर्त्ताव करते हैं, इसे सारा संसार जानता है, पर क्या आप ऐसा एक भी प्रमाण दे सकते हैं कि किसी हिन्दू ने भी कहीं किसी मसजिद को ढाहा या कुरान शरीफ़ को जलाया है? यह बात शान्त और धर्मभीरु हिन्दुओं के स्वभाव से लाखों कोस दूर है।"

बुड्ढा फ़क़ीर,-" बेशक, बेशक, पंडतजी! बाक़ई, बेचारे हिन्दू बहुत ही ग़मख़ोर और सच्चे होते हैं। मगर, हां! उस बात को तो आपने अभीतक बतलाया ही नहीं कि इस फ़साद का वायस क्या है?"

हरिहर,-" बात यह है कि हमलोग सदा से इस मन्दिर में अपने देवता की पूजा करते आते हैं, उसमें घड़ी घंटे भी बजते हैं, शंख भी बजता है, परन्तु जब तब मुसलमान यहां आकर घड़ी, घंटे और शंख बजाने को मना करते और धमकाते रहते हैं। इसी बात पर कई मुसलमानों से परसों कुछ कहा सुनी होगई थी, सो कल रात को बहुत से मुसलमान हथियार लेलेकर आए और मंदिर को गोशाला से बलपूर्वक चालीस गऊ खोल लेगए, जो अभी तक जीती, जागती एक ठिकाने पर बंधी हुई हैं। आज सबेरे हमलोगों ने उनलोगों के पास जाकर बहुत कुछ बिनती की और चालीस गउओं के हज़ार रुपए भी देने चाहे, पर वे लोग ज़रा न पसीजे और इस समय तीसरे पहर को गोल बांधकर इस मन्दिर पर आ टूटे थे।"

बुड्ढा फ़क़ीर,-" बेशक, आपने ये सब हालात बिल्कुल सही बयान किए हैं, मैं भी इसी शहर में घूमा करता हूं, इस वजह से मुझ से शहर की कोई वार्दात छिपी नहीं रह सकती। मगर क्यों साहब! जब कि कुछ शोहदों ने आपके यहां एक तौर से डांका डाला और आपलोगों की आर्ज़ू मिन्नत पर कुछ भी ख़याल न किया तो मुनासिब था कि आपलोग सुल्ताना रज़ीया बेगम साहिबा के

हुज़ूर में इस बात की नालिश करते।"

हरिहर,-"आपने बहुत ही ठीक कहा है, किन्तु क्या करें! यद्यपि हमलोग यह बात सुनते रहते हैं कि बेगम साहिबा खुद दर्बार में क़बा और ताज पहन कर बैठतीं और बड़े अदल इन्साफ़ के साथ लोगों की नालिश फ़र्याद सुनती हैं; परन्तु यह बात कहां तक सच है, इसे परमेश्वर जाने। मुसलमानों के लिये बेगम साहिबा के दर्बार में रोक टोक है या नहीं, इसे हम नहीं जानते; किन्तु हम लोग अपनी गउओं की गुहार सुनाने दर्बार में जाया चाहते थे, परन्तु पेशकार ने हमलोगों को निकलवा दिया, तब हमलोगों ने हज़ार रुपए देकर गौओं को छुड़ाना चाहा था, उसका जो कुछ नतीजा हुआ, उसे तो आपने अपनी आँखों देख लिया।"

इन बातों को बुड्ढा फ़क़ीर बड़े गौर से सुनता रहा और जब हरिहरशर्म्मा कह चुके तो उसने कुछ जोश में आकर कहा,—

"हैं! यह क्या बात है? बेगम साहिबा का तो यह आम हुक्म है कि,-'जिस अदने या आले का जी चाहे, बेखटके दर्बार में हाज़िर होकर अपनी फ़र्याद सुनावे।"

हरिहर—"आपके कहने को मैं काट नहीं सकता, किन्तु जो सच बात थी, वह आपसे कही गई। सचमुच हमलोग दर्बार तक न पहुंचने पाए और बीचही में से धता किए गए।"

बुड्ढा फ़क़ीर,-"अच्छा; आप उस शख़्स का नाम बतला सकते हैं कि वह कौनसा पेशकार है, जिसने आपलोगों को दर्बार में जाने से रोका और उलटा वापस किया?"

हरिहर,-"महावतख़ां!"

बुड्ढा फ़क़ीर,-"ख़ैर खुदा के फ़ज़ल से आज आप लोग बच गए; इसके लिये अपने खुदा का शुक्रिया अदा कीजिए; अब बंदा रुख़सत होता है।"

हरिहर,-"शाहसाहब! यदि कुछ अनुचित न हो तो कुछ थोड़ासा श्रीठाकुरजी का प्रसाद पाकर जल पीजिए।"

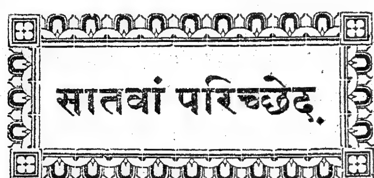
यह सुन, बुड्ढा मुस्कुरा कर उठ खड़ा हुआ और बोला, "साहब! मुझको आपके ठाकुरजी की शीरनी से कुछ इन्कार नहीं, मगर इस वक्त मुआफ़ कीजिए। बंदा तो रोज़ ही सदा लगाता घूमता फिरता है; किसी दिन आपका भी मिहमान बन

जायगा। "

इस पर यद्यपि हरिहर ने बहुत कुछ कहा, पर बुड्ढा मुस्कुराकर फिर किसी दिन आने का वादा करके वहां से चलता बना; उसके दोनों शागिर्द या चेले भी उसके पीछे हो लिये। फिर उसी तरह वे तीनों रट लगाते और गली कूचे में घूमते हुए अंधेरा होने पर एक मैदान पार करके शाही क़िले के पिछवाड़े एक चोर दर्वाजे पर जाकर ठहर गए। तब एक शार्गिद ने उस दर्वाजे को थपथपाया, जिस इशारे को समझ किसीने भीतर से कुंडी खोलदी और वे तीनों भीतर घुस गए। दर्वाज़ा फिर भीतर से बंद कर लिया गया।







दर्बार-ई-सुल्ताना।

" करेंगे हम्हीं खुश रियोया को अपनी।
हम्हीं पर उम्मीदे हैं मौक़ूफ़ उसकी॥
हम्हीं शमा इसलाम रौशन करेंगे।
बड़ों का हम्हीं नाम रौशन करेंगे॥"

(बेगम)

हमलोगो ने अंगरेज़ी कचहरियां, हाईकोर्ट और लाट-साहब की कौन्सिल की बहार देखी है और अंगरेज़ी पार्लिमेन्ट महासभा का हाल पुस्तकों तथा समाचार पत्रों में पढ़ा है; किन्तु इन सभों से बादशाही दर्बार या कचहरी की छटा कुछ निराली ही थी। एक जगह पर, डाकृर म्यानसी, जिसने शाहजहां और औरंगज़ेब का दर्बार देखा था, अपने 'भ्रमणवृत्तान्त' यों में लिखता है कि:—

" योरोपीय राजनैतिक दर्बार या कचहरियों की अपेक्षा हिन्दुस्तान के बादशाही दर्बार तो बड़े शान शौकत के होते हैं और उन में जो मुकदमात पेश होते हैं, वे तुरंत फैसल हो आते हैं; पर कचहरियां जहांपर क़ाज़ी साहब का बिल्कुल अख्तियार होता है, इन्साफ़ तो क्या, बाज़ बाज़ मुकद्दमें के कभी फ़ैसल होने की बारी ही नहीं जाती।"

यद्यपि म्यानिसी के मत से हम सम्पूर्ण सहमत नहीं हैं और हम ऐसा समझते हैं कि शाही दर्बार या क़ाज़ी की सभी कचहरियों में ही अन्धेर या घूस का बाज़ार गर्म न था, बल्कि कहीं कहीं बहुत सी छान बीन के बाद सच्चा न्याय भी किया जाता था; किन्तु हां, यह सच है कि कभी कभी कोई कोई मामले क़ाज़ी के यहां पड़े पड़े योंहीं गल पच जाते थे और उनपर कुछ भी बिचार या न्याव नहीं होता था; परन्तु यह दोष किसी किसी शाही दर्बार में

भी था। हां! इतना सुभीता उस समय अवश्य था कि न इतना स्टाम्पों का खर्च था, न वकील मुख़तारों की खैंचातानी थी, न मुद्दत तक मुकद्दमा झूला करता था और न मुद्दई मुद्दालह के लिये आज कल की भांति अत्यन्त कष्ट उठाना पड़ता, या सर्वस्व खोना पड़ता था। उस समय घूस भी अवश्य चलती थी और न्याय का अन्याय, और अन्याय का न्याय भी प्रायः होता था, पर सच्चा न्याय भी अवश्य होता था। उस समय स्टाम्पों की भरमार, वकील मुख़तारों के उत्पात और मुहर्रिरों की तहरीरी रसूमात का उलझेड़ा न था, और लोग सादे काग़ज़ पर अर्ज़ी लिख कर पेश करते थे और कहीं कहीं अपना उज़् जबानी ही कह सुनाते थे; जिस पर जो कुछ फैसला होने को होता, वह या तो उसी समय हो जाता, या कई दिनों के भीतर ही खूब छान बीन के साथ उसका कुछ न कुछ निबटारा होही जाता था; पर आज कल की तरह वह ख़र्च इतना बढ़ा चढ़ा न था कि लोगों को अखरता, या तबाह कर डालता।

आज हम सुल्ताना रज़ीया बेगम के दर्बार, या शाही कचहरी के इन्साफ़ का दो एक नमूना पाठकों को दिखलाते हैं, जिससे पाठक उस समय की अदालत का कुछ कुछ हाल जान सकेंगे।

प्रतिदिन आठ बजे से बारह बजे दिन तक सुल्ताना रज़ीया बेगम दर्बार करती थी। जब वह दर्बार में आती, मर्दानी पोशाक पहिर कर; अर्थात् क़ुबा और ताज पहिर कर तख़्तपर बैठती थी। उस समय उसकी दोनों सहेलियां—सौसन और गुलशन—भी मर्दानी पोशाक में रहतीं और तख़्त के पीछे नंगी तल्वारें लिये हुए जो सौ के लगभग खूबसूरत तातारी बांदियां खड़ी होतीं, वे भी मर्दानी ही पोशाक पहिर कर।

शाही दर्बार हाल बिल्कुल संगमर्मर पत्थर का बना हुआथा। वह दो सौ हाथ लंबा और डेढ़ सौ हाथ चौड़ा था। उसमें अस्सी खंभों की तेहरी कतारें थीं, जिन पर संगमर्मर की साफ़ और चिकनी पटिया का पटाव था। दर्बार में पहुंचने के लिये तीनों ओर पच्चीस पच्चीस डण्डे की सीढ़ियां बनी थीं और चौथी ओर से वह महल सरा से मिला हुआ था। महल की दीवार से सटा हुआ, बीचोबीच चार हाथ ऊंचा संगमर्मर का एक चौखूटा चबूतरा बना हुआ था।

जिसपर सोने का जड़ाऊ सिंहासन रक्खा रहता था। जब बेगम दर्बार में आया चाहती, महल की खिड़की से आती, जो तख़्त के पीछे ही दीवार में बनी थी। वह उसी राह से अपनी सहेलियों और बांदियों के साथ आती और दर्बार बर्ख़ास्त होने के समय उसी रास्ते से महल के अन्दर चली जाती थी! तख़्त के पीछे चबूतरे पर इतनी जगह ख़ाली थी, जिसपर सौ बांदियां मज़े में खड़ी हो सकती थीं; और तख़्त के अगल बगल सोने की कुर्सियों पर सौसन और गुलशन के बैठने की जगह थी। तख़्त के सामने, नीचे, चबूतरे पर दाहिनी ओर वज़ीर के बैठने के लिये चांदी की कुर्सी लगी रहती थी और बाईं ओर पेशकार के बैठने के वास्ते सन्दली कुर्सी। फिर नीचे, अर्थात् दर्बार-हाल में ज़मीन में, अमले, फैले, अमीर, उमरा, वहदेदार, ज़िमीदार इत्यादि अपनी अपनी योग्यता के अनुसार बैठते थे। तख़्त के सामने वाली जगह ख़ाली रहती थी, वहां मुद्दई, मुद्दालह आआ कर खड़े होते और नालिश फ़र्याद करते थे। वहां नंगी तल्वारें लिये लाल वर्दीवाले सिपाही बराबर कत्तार बांधे खड़े रहते और दर्बार-हाल के नीचे सज धज कर पांच सौ सवार खड़े होते थे, जिनके घोड़ों का रुख़ दर्बार की ओर रहता था और जिनके चमकते हुए भाले की नोक में लाल झंडियां फहराया करती थीं। यह दर्बार हफ़्ते में केवल दो दिन, अर्थात् जुम्मा और जुमेरात के दिन नहीं लगता था। यही दस्तूर और कचहरियों का भी था।

आज दर्बार-हाल के नीचे सामने, लंबे चौड़े मैदान में बड़ी भीड़ इकट्ठी हुई है; जिसमें कुछ फ़र्यादी हैं और कुछ तमाशा देखनेवाले। क्योंकि कल बेगम साहिबा की ओर से सारे शहर में इस बात की मनादी फेरी गई थी कि-,"जिस शख़्स को जो कुछ फ़र्याद करना हो, वह बेखटके दर्बार में चला आवे। उसकी नालिश सुनी जायगी और उसपर ग़ौर करके बड़े अदल इन्साफ़ के साथ मुक़द्दमा फ़ैसल किया जायगा। अगर कोई अहलकार सर्कारी, किसी फ़र्यादी को चाहे वह किसी हैसियत का क्यों न हो, दर्बार शाही में आने से रोकेगा तो इस बात के सुबूत होने पर वह क़त्ल किया जायगा।" इत्यादि।

यही कारण था कि आज भीड़ का कोई ठौर ठिकाना नहीं है,

किन्तु प्रताप की यह महिमा है कि कहीं पर ज़रा भी शोर गुल, या बकबक, झकझक, अथवा बेसिल्सिला नहीं है और सब चुप-चाप, करीने से दर्बार हाल के नीचे—सामनेवाले मैदान में–पेड़ों की छाया में बैठे हुए हैं। वहीं पर एक जगह सिपाहियों की हिफ़ाजत में बेड़ी हथकड़ियों से मज़बूर वे सब मुसलमान कैदी भी बैठाए गए हैं, जो एक मन्दिर के ढाह देने के इरादा करने और वहांके ब्राह्मणों के क़त्ल कर डालने पर उतारू होने के जुर्म में गिरफ़्तार किए गए हैं, जिसका हाल हम पहिले लिख आए हैं।

एक जगह पर उसी मंदिर के पुजारी या अधिष्ठाता हरिहर-शर्म्मा भी बहुत से ब्राह्मणों के साथ बैठे हुए हैं और एक जगह बहुत सी गउवें बंधी हुई हैं।

आठ बजने में अब थोड़ीही देर है और दर्बार, सारे दर्बारियों से भर गया है। लोग करीने से अपनी अपनी जगह पर बैठे हुए बेगम साहिबा के तशरीफ़ लाने का आसरा देख रहे हैं। इतनेही में क़िले के फाटक पर तोपें दनकने लगीं, जो बेगम साहिबा के दर्बार में पधारने की सूचना देती थीं। इधर घड़ियावल ने ज्योंहीं आठ बजाया, त्योंहीं महल की खिड़की, जो तख़्त के पीछे थी, खुली, और बांदियां निकलकर तख़्त के पीछे खड़ी होगईं; फिर अपनी दोनो सखियों के साथ रज़ीया आई और तख़्त पर बैठ गई। उस समय सब दर्बारी आदि जितने लोग वहां पर थे, सबके सब खड़े होगए थे और बेगम के बैठने पर सभोंने तीन तीन बार जमीन चूम कर शाहानः सलाम किया। सिपाही और सवार अपनी अपनी जगह पर खड़े खड़े तल्वार और भाला टेककर आदाब बजा लाए और सुरीली नफ़ीरी बजने लगी। दस मिनट तक शहनाई बजा की, तब तक सब अपनी अपनी जगह पर अदब से झुके हुए खड़ रहे; फिर शहनाई का बजना बन्द हुआ और बेगम का इशारा पाकर उसकी सहेलियां और दर्बारी लोग अपनी अपनी जगह पर बैठ गए।

इसके बाद बेगम ने कुछ नर्मी और गर्मी के साथ पेशकार को धीरे धीरे इसलिये कड़ी कड़ी, पर ज़रा मुलायम फ़िटकार सुनाई कि उसने चन्द लोगों को फ़र्याद करने के लिये दर्बार में आने से रोका था। किन्तु प्रताप भी क्याही विचित्र वस्तु है कि पेशकार

ने अपने उस कुसूर को तुरंत क़बूल कर लिया, माफ़ी मांगी और आगे से ऐसी हर्क़त-ई-बेजा न करने की क़सम खाई।

फिर पेशकार के इशारा करने पर क़ाज़ी ने हरिहरशर्म्मा आदि हिन्दुओं को लाकर हाज़िर किया और हरिहरशर्म्मा ने संक्षेप में वे ही सब बातें बयान कीं, जो कि उन्होंने एक दिन पहिले सरे ज़मीन पर बुड्ढे फ़क़ीर से कही थीं। इसके बाद वे सब बलवाई हाज़िर किए गए, पर उन्होंने बड़ी शोख़ी के साथ अपने किसी क़सूर को भी क़बूल न किया, बल्कि यों कहा कि,-"हम बेगुनाहों को सर्कारी सिपाही बिला वजह घरों में घुस घुस कर पकड़ लाए हैं।" किन्तु उनके इस शरारत से भरे उज़्र पर कुछ भी ध्यान न दिया गया और हर एक को तीन तीन साल के बामिहनत जेल की सज़ा दी गई। सज़ा का हुक्म होते ही वे सब जेलख़ाने भेजे गए और गउवें, जो वहांपर लुटेरों के यहांसे लाकर रक्खी गई थीं, हरिहरशर्म्मा को देदी गईं क्योंकि वे सब उसी मन्दिर की थीं, जिसका हाल लिखा गया है।

इसके बाद एक स्त्री, जिसकी नाक कटी हुई थी और उस पर पट्टी बंधी हुई थी, दर्बार में आई और उसने यह फ़र्याद की कि,—'एक रोज़ ठीक वक़्त पर ख़ाना न पकाने के क़सूर में मेरे शौहर ने मेरी नाक काट कर मुझे घर से निकाल दिया है।"

इस पर उसका शौहर पकड़ कर लाया गया और सुबूत लेने बाद नाक काट कर वह दर्बार से बाहर निकाल दिया गया और वह औरत यतीमख़ाने भेज दी गई।

एक मुक़द्दमा 'ज़िनाबिल्ज़ब्र' का था। उसमें उस शख़्स की दस बरस की सज़ा की गई, जिसने एक लड़की को ख़राब किया था; और उस लड़की को हर्जाने के तौर पर उस बदकार मर्द से दो हज़ार रुपए दिलवाए गए।

कई दिन पहिले एक शख़्स ने यह नालिश की थी कि,-"फ़लां मुकाम पर 'ख़ाजे हसन हब्बाल' नाम का एक सौदागर रहता है, वह मेरी बीबी को निकाल ले गया है।" इस पर वह शख़्स मय उस औरत के गिरफ़्तार कर के लाया गया था, पर उस औरत ने उस सौदागर के साथ निकल जाने में अपनी रज़ामंदी ज़ाहिर की, इसलिये उस औरत की शरारत पर यह सज़ा दी गई कि उस

औरत और उसके निकाल लानेवाले यार–दोनों को–जीते जी आग में जला दिया गया।

एक मुक़द्दमा किसी रंडी का था। उसकी नौजवान और ख़ूबसूरत लड़की को एक हिन्दू ने, जो पहिले उसके इश्क़ में मुसलमान भी होगया था, उस लड़की को मारडाला था। तहक़ीक़ात होनेपर उस लड़की की लाश के साथ वह शख़्स ज़िन्दा दरग़ोर किया गया।

एक मुसलमान ने किसी हिन्दू की औरत को ज़बर्दस्ती उसके घर से निकाल लाकर अपने यहां क़ैद किया था और वह उसका सत बिगाड़ना चाहता था; आख़िर वह पकड़ा जाकर जेल भेजा गया और वह सती फिर अपने पति के घर पहुंचाई गई।

इनके अलावे कई चोरी, चमारी और मार पीट के महज़ मामूली मुकद्दमें भी थे, जो बात की बात में फैसल कर दिए गए। यहां तक कि दो एक आदमी क़त्ल किए गए, सौ पचास पर कोड़े पड़े, और कुछ ज़रीबाना देकर छूटे, बाक़ी जेल की हवा खाने भेजे गए। यह नित्यही की लीला थी।

निदान, ज्योंही घड़ियावल ने बारह का गजर बजाया था कि तोपें छूटने और शहनाई बजने लगीं। सब दर्बारी अपनी अपनी जगह पर खड़े हो, झुक झुक कर सलाम करने लगे और बेगम अपनी सहलियों और बांदियों के साथ तख़्त के पीछेवाली खिड़की के रास्ते से महल के अन्दर चली गई और उसके जाने पर दर्बार बर्ख़ास्त हुआ।

आज के इस दर्बार का चरचा सारे शहर में फैला हुआ था और सभी छोटे, बड़े, हिन्दू, मुसलमान, बेगम के अदल इन्साफ़ की बड़ाई करते थे। हां, कोई कोई मुसलमान उसे दीन इस्लाम के बख़िलाफ़ बतला कर क़ाफ़िर भी कहते थे, क्योंकि उसने मुसलमानों के ज़ुल्म से बेचारे हिन्दुओं की जानें बचाई थीं, पर सभों का ही ऐसा ख़याल न था, क्योंकि जो योग्य और सज्जन मुसलमान थे, वे बेगम के इस न्याव को सराहते थे।

आज उस मंदिर में बड़ी धूम मची हुई है और सारे शहर के हिन्दू इकट्ठे होकर बेगम साहिबा की मंगल कामना के लिये 'श्रीहरिकीर्त्तन' में लगे हुए हैं और प्रसाद बंट रहा है। रौशनी इतनी हुई है कि

दिवाली का भ्रम उपजाती है। इस तमाशे को दूर से खड़े खड़े वे तीनों फ़क़ीर भी देख रहे हैं, जिनके विषय में हम पहिले कुछ लिख आए हैं।

हरिहरशर्म्मा इस उत्सव में यद्यपि तन मन से लगे हुए हैं, पर उनकी दृष्टि चारों ओर दौड़ रही है। ज्योंही उन्होंने दूर पर खड़े हुए उस बुड्ढे फ़क़ीर को देखा, त्योंहीं वे दौड़े हुए उसके पास चले गए और वे उसे गले लगायाही चाहते थे, कि बुड्ढा पीछे हट गया और बोला,—" अजी ! पंडतजी ! बंदा मुसलमान है !

हरिहर,—(उसका हाथ पकड़ कर) " आप जैसे योग्य और सज्जन मुसलमान पर कड़ोरों हिन्दू निछावर हो सकते हैं। चलिए, आज श्रीठाकुरजी का प्रसाद पाइए; क्योंकि आपने ऐसा वादा भी किया था कि,—" दूसरे दिन लूंगा। "

बुड्ढा फ़क़ीर,—" अगर आप मुझे पहिले अपने ठाकुरजी की सूरत दिखलाइए, तब मैं परशाद लूंगा । "

हरिहर,—" आइए। "

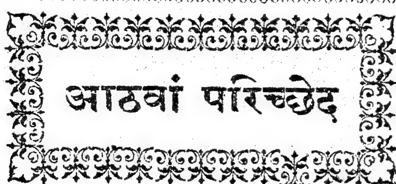
इतना कहकर हरिहरशर्म्मा ने उस बुड्ढे और उसके दोनों शार्गिदों को मंदिर के बाहरी सहन में ऐसी जगह पर लेजाकर खड़ा कर दिया कि जहांसे श्रीवृन्दावन-बिहारी, श्रीराधावल्लभ की बांकी छटा का भली भांति दर्शन होता था। भला, ऐसी शोभा, यह भाव, ऐसा हरिकीर्त्तन और इस प्रकार का आनन्द उस बुड्ढे ने कभी काहे को देखा होगा ! सो वह कुछ चकित सा हो, अपने दोनों शार्गिदों के साथ हंस हंस कर फ़ार्सी में बातें करने लगा। उन मुसलमान फ़क़ीरों का मंदिर के बाहरी सहन में आना यद्यपि किसी किसी आग्रही हिन्दू को अच्छा नहीं लगा था, पर यह किसकी मजाल थी, कि जो हरिहरशर्म्मा की इच्छा के विरुद्ध ओठ फड़का सकता ! तिस पर सारे शहर में यह बात फैल गई थी कि,—'इसी फ़क़ीर ने उन बलवाइयों के हाथ से इस मंदिर और यहां के ब्राह्मणों की जान बचाई है;' इसलिये हिन्दू उस बुड्ढे को स्नेहभरी दृष्टि से देखते और सलाम करते थे; पर हरिहरशर्म्मा की आज्ञा से कोई भी न तो बुड्ढे से बातें करने पाता; और न पास जाने पाता था। यह प्रबंध इसीलिये किया गया था कि जिसमें कोई हिन्दू इस लाइक़ फ़क़ीर के साथ कुछ अनुचित बर्ताव न कर बैठे।

निदान, जब हरिहरशर्म्मा बुड्ढे फ़कीर को दोना भर प्रसाद देने लगे तो उसने अपने एक शागिर्द को इशारा किया, जिसने प्रसाद का दोना ले लिया। फिर दोनों शागिर्दों को भी दो दोने दिए गए। इसके बाद बुड्ढे ने अपनी झोली में से एक पोटली निकाली और उसे हरिहर के हाथ में देकर कहा,-"आप ज़रा इसे अकेले में लेजाकर, खोलकर देखिए।"

यह सुन और पोटली लेकर हरिहरशर्म्मा वहांसे चले गए, तब वह फ़कीर भी अपने दोनों शागिर्दों के साथ वहांसे चलता बना।

हरिहरशर्म्मा ने निराली कोठरी में जाकर उस पोटली को खोला तो उसके अन्दर से चांदी का एक गोल डब्बा निकला, जिसके खोलतेही एक हलकी चीख़ मार कर हरिहरजी सन्नाटे में आगए। तो उस डब्बे में क्या था? सुनिए, दो लाख रुपये की लागत के दो पन्ने के हार थे, जो कि श्रीराधाबिहारीजी के लिये उस बुड्ढे फ़क़ीर ने दिए थे; और उसी डब्बे में फ़ारसी में लिखा हुआ एक ख़त भी था, जिसे पढ़ते ही हरिहर पागलों की तरह उठ खड़े हुए और कोठरी में से निकल, दौड़े हुए उस जगह पर आए, जहां पर उन तीनों फ़क़ीरों को वे खड़े कर गए थे; किन्तु अब वहां पर फ़क़ीरों का नाम निशान भी न था, क्योंकि वे तीनों उसी समय वहांसे चल दिए थे। फिर तो हरिहरजी ने वहां पर जितने लोग खड़े थे, सभोंसे अलग अलग उस फ़क़ीर के विषय में बहुत कुछ पूछा और मन्दिर के बाहर निकलकर दूर दूर तक फ़क़ीर को ढूंढ़ा, पर उसका कहीं कोई पता न लगा। लाचार, वे आधी रात के समय मन्दिर में लौट आए और उन्होंने वे दोनों हार श्रीठाकुरजी को उसी समय पहिरा दिए, पर उनके पाने का, या उस ख़त का हाल कुछ भी किसी पर प्रगट न किया।

पाठकों ने शाही दर्बार के कठोर दंड का हाल पढ़ा होगा, इसलिये वे कदाचित इतने कठोर दंड को अच्छा न समझते होंगे! किन्तु हमारी समझ से अपराध की संख्या घटाने में जैसा कठोर दंड हेतु हो सकता है, वैसा साधारण दंड नहीं; यही कारण है कि महर्षियों ने अपराधों के लिये कठोर दंड की व्यवस्था की है; हम उसी पक्ष को मानते हैं।



आठवां परिच्छेद

दिल का देना और लेना

"तेरा वस्ल हो, ख़ाहिशे दिल यही है।
मुहब्बत का, उल्फ़त का हासिल यही है॥"

(सफ़दर)

दोपहर का समय है। शाही बाग़ में काम करनेवाले अपने अपने डेरे पर खाने पीने और सुस्ताने गए हुए हैं; इसलिये इस समय बाग़ में सन्नाटा है। ऐसे समय में बहादुर याकूब बाग़ के उस निराले हिस्से में, जिधर नक़ली पहाड़ी और झील बनी हुई है, एक लतामण्डप के अन्दर सन्दली चौकी पर लेटा हुआ कोई पुस्तक देख रहा है। उसका चेहरा उतरा हुआ है, आँखें भर्राई हुई हैं और उदासी की छाया से चेहरा झांवला सा होरहा है। यद्यपि वह पुस्तक पढ़ रहा है, पर रह रह कर ठंढी सांसें भी लेता है और कभी कभी अपने कलेजे पर हाथ रख, उदास आँखों से इधर उधर देखने भी लगता है। वह इसी अवस्था में बहुत देर से पड़ा था कि पत्तों के खड़खड़ाने से किसी के आने की आहट पाकर चौकन्ना हो, इधर उधर देखने लग गया। थोड़ीही देर में उसने अपने सामने बेगम की प्यारी सहेली सौसन को देखा, जिसे देख, वह घबरा कर उठ खड़ा हुआ और उसकी ओर अदब से झुक कर बोला,—

" मुआफ़ कीजिएगा; इस वक्त आप बाग़ में तशरीफ़ लाएंगी, इसकी मुझे मुतलक ख़बर न थी, वर न मैं हर्गिज़ बाग़ के अन्दर न रहता।"

आज शुक्रवार है, दर्बार बन्द है, बेगम ख़ाना ख़ाने बाद अपनी ख़ाबगाह में आराम कर रही है और दोपहर का—निराले का—वक्त है; इसीसे मौक़ा देखकर सौसन बाग़ में आई थी। उसने किसी ढब से यह बात जान लीथी कि,—'दोपहर के वक्त याकूब बाग़ में कहीं न कहीं पर आराम किया करता है;—सो वह उसीसे मिलने

के लिए आई थी । बाग़ की कई निराली जगहों में याक़ूब को खोजती खोजती वह झील के पास आई और वहां परके लतामण्डप के अन्दर ज्योंही वह घुसी, उसने याक़ूब को अपने सामने पाया। उसे देख, उठकर याक़ूब ने जो कुछ कहा था, उसे हम ऊपर लिखही आए हैं; जिसे सुनकर लज्जा से नीची नार किए हुए सौसन ने यों कहा,—

"वल्लाह, आप उठे क्यों; बदस्तूर अपनी जगहपर बैठिए, आराम कीजिए। अगर मैं ऐसा जानती कि मेरे आने से आपके आराम में ख़लल पहुंचेगा तो मैं हर्गिज इधर क़दम न रखती।"

याक़ूब,–(सिर झुकाए हुए) "हज़रत! एक अदने गुलाम के साथ आपको इस तरह की गुफ़्तगू न करनी चाहिए।"

सौसन,–"लाहौलबलाक़ूवत, साहब! खुदा के वास्ते ऐसा बद कलमा ज़ुबाने शीरीं से न निकालिए। आख़िर! मैं भी तो सुल्ताना की एक अदनी लौंडी ही हूं।"

याक़ूब ने सिर उठाकर सौसन की ओर देखा और चार आंखें होतेही सौसन ने शरमा कर सिर झुका लिया और याक़ूब ने आजिज़ी से कहा,—

"खुदारा, ऐसा न फ़र्माइए आपमें और मुझमें ज़मीन और आसमान की तफ़ावत है।"

सौसन,—"लिल्लाह, इस नाक़िस ख़याल को आप अबआप ने दिल में जगह न दें और बराहे मिहरबानी अपनी जगह पर तशरीफ़ रक्खें; वर न मैं फ़ौरन यहांसे चली जाऊँगी और यही दिलमें समझूंगी कि आपने मेरी दिलशिकनी की।"

याक़ूब,—"वल्लाह आलम! भला यह कभी मुमकिन है कि आप खड़ी रहें और बंदा बैठे, अगर नागवार ख़ातिर न हो तो आप यहां पर तशरीफ़ रक्खें, मैं ज़मीन में भी बैठ जाऊँगा।"

सौसन,—"साहब! बस, ज़ियादह चुनाचुनी या तकल्लुफ़ की कोई ज़रूरत नहीं है। आप बैठें, मैं खड़ी रहूंगी।"

याक़ूब,—"क्या खूब! आप खड़ी रहेंगी और बंदा बैठेगा! यह भी मुमकिन है? खैर तो ज बआप बैठें होगी नहीं, और मैं बग़ैर आपके बैठे, हर्गिज न बैठूंगा तो इससे यही बिहतर है कि दोनों ही खड़े रहें!!!"

सौसन,—"तो मैं जाती हूं; अफ़सोस ! आपने मेरा कहना न माना, इसका मुझे बड़ा रंज हुआ ! "

याकूब—"मआज़ अल्लाह ! यह कैसा इन्साफ़ है ? "

सौसन,—"तो फिर आप मेरी बात मानते क्यों नहीं ! "

याकूब—"इसलिये कि आपने भी तो मेरा कहना नहीं माना !"

सौसन,—"वल्लाह ! इस नाज़ को तो देखो ! "

याकूब,—"नाज़ की एक ही कही आपने ! अय ! हज़रत ! नाज़ तो नाज़नीनों के पास रहता है, बंदा तो एक अदना सिपाही आदमी है, भला यह नाज़ नखरा क्या जाने ! "

इतनी बातें आपस में जबतक हुईं, उतनी देर में कई बार सौसन और याकूब की आंखें चार हुई थीं, पर हर बार सौसन की आंखों को ही नीचा देखना पड़ा हो, ऐसा न था, बरन कई बार याकूब की भी आंखें नीचा हो गई थीं । इतनी बातें होने के बाद सौसन उस संदली चौकी पर जाकर बैठ गई और बोली,—"लीजिए, अब तो आपका कहना मैने मान लिया न ! अब आइए, आप भी तशरीफ़ रखिए । "

इतना सुन याकूब उसके सामने ज़मीन में बैठ गया । यह देख, सौसन भी चट उतर कर उसके सामने ज़मीन में बैठ गई; तब याकूब ने चकपका कर कहा,—

"अल्लाह ! आपने यह क्या ग़ज़ब किया !"

सौसन,—"क्यों कर ।"

याकूब,—"यह कि ज़मीन में तशरीफ़ रखना आपके ख़िलाफ़ शान हुआ ! "

सौसन,—"जनाब ! ख़ाकसारी से बिहतर दुनियां में कोई शै हई नहीं । "

याकूब,—"यह फ़र्माना आपका बजा है, मगर बात यह है कि रुतबे और दर्ज़े का ख़याल रखना हर हाल में लाज़िम है ।"

सौसन,—"मैं उस रुतबे और दर्ज़े पर ख़ाक डालती हूँ, जो आपकी बहादुरी की क़दर न करे, या उस पर अपने तईं निसार न कर डाले ।"

याकूब,—"आपकी इस मिलनसारी, क़द्रदानी और लियाक़त का मैं तहेदिल से शुकुर गुजार होता हूं । मगर यह मुझे हर्गिज़

गवारा नहीं है कि आप ज़मीन में तशरीफ़ रक्खें।"

सौसन,—"वल्लाह, बतलाइए तो सही, कि जब तर्फ़ैन से ज़िद है तो यह मामला क्योंकर तय हो सकता है!"

याकूब,—"लिल्लाह, मैं अपनी ज़िद से बाज़ आया, अब आप जो कुछ कहेंगी, बिला उज़्र उसे मैं मान लूंगा।"

सौसन,—"शुक्र है, खुदा का कि आप बहुत जल्द राह पर आगए; खैर, तो बिस्मिल्लाह कीजिए, चलिए, चौकी पर बैठिए।"

"अब क्या फ़क़त मैंही बैठूंगा।" यों कहकर उसने सौसन का हाथ पकड़ कर उठाया और उसे चौकी पर बैठा कर उसके बगल में आप भी बैठ गया। उस स्पर्श–सुख से सौसन के रोम रोम से सात्विक भाव की तरंगें निकलने लग गई थीं; और कम्प, रोमाञ्च, प्रस्वेद, स्वरभंग, वैवर्ण्य आदि सात्विक लक्षण उसके चेहरे और सारे शरीर से प्रगट होने लगे थे। याकूब के मुख और शरीर में भी ये लक्षण दिखलाई पड़ने लगे थे, पर वे सौसन की भांति उतने पुष्ट और बलिष्ठ न थे; कदाचित यह उसकी अद्वितीय वीरता का प्रताप हो! तथापि वह एक दम उन भावों से रहित न था।

थोड़ी देर तक वे दोनो एक दूसरे के बगल में चुपचाप बैठे रहे, फिर याकूब ने कहा,—

"आज मुझसा खुशनसीब शख़्स दुनियां में दूसरा न होगा।"

सौसन ने यह सुन, शर्मा कर सिर झुका लिया और बात टालने के मिस से कहा,—

"साहब! उस रोज़ तो आपने, वल्लाह! ग़ज़ब का जौहर दिखलाया था!!! मैं उसी रोज़ से इस फ़िराक़ में थी कि किसी ढब से मौका पाऊँ तो आपसे चार चश्म करके उस सिपहगरी के लिये आपको मुबारकबाद दूं।"

याकूब,—"तब तो जनाब! खुदा के फ़ज़ल से वह दिन मेरे लिये बहुतही अच्छा गुज़रा कि मैंने नेकनामी के साथ आपके दिल में जगह पाई!"

सौसन,–"(शर्माकर) "क्या खूब! आप जैसे बहादुर हैं, वैसे ही तबीयतदार भी मालूम देते हैं।"

याकूब,–"क्या सचमुच! वल्लाह, सच बतलाइएगा कि मुझमें

आपने कौनसी तबीयतदारी देखी ?"

इस पर सौसन मारे लज्जा के सिमट गई और कुछ देर चुप रह कर, उसने दूसरी बात छेड़दी,-कहा,-

"आपके हाथ में यह कौनसी किताब है ?"

याकूब,-"यह 'तवारीख़ यूनान' है। मेरा दिल तवारीख़ों में बहुत लगता है, इसलिये जब मैं काम से फुर्सत पाता हूं और कोई उम्दः तवारीख़ हाथ लग जाती है तो फुर्सत का वक्त उसीके देखने में सर्फ़ करता हूँ।"

सौसन,—"ऐसा ! तो इसमें वहांके गुज़श्तः हालात होंगे ?"

याकूब,—"हां यह तो हई है, मगर इसके अलावे सल्तनत के मज़बूत करने, बढ़ाने और काइम रखने के बहुत से तरीके ऐसी उम्दगी के साथ बयान किए गए हैं और उन पर ऐसी अच्छी बहस की गई है कि जिसके अमल में लाने से एक समझदार इन्सान ख़ासे वज़ीर की लियाक़त हासिल कर सकता और कमज़ोर सल्तनत को मज़बूत बनाकर क़ाइम रख सकता है।"

सौसन,—"तब तो यह निहात ही उम्दः किताब है। वल्लाह ! मेरा भी दिल चाहता है कि मैं एक मर्तबः इसकी सैर करूं।"

याकूब,-(किताब उसके आगे बढ़ाकर) "लीजिए शौक से देखिए ! मगर इसकी ज़ुबान तुर्की है।"

सौसन,—"मैं तुर्की ज़बान बख़ूबी समझ लेती हूँ।"

याकूब,-(खुश होकर) "अलहम्द् लिल्लाह ! तब तो आप बड़ी आलिम औरत नज़र आती हैं !!!"

सौसन,—(शर्माकर) "जी नहीं, पांच चार ज़ुबानों के अलावे और मैं जानती ही क्या हूँ ?"

याकूब,—"वल्लाह ! इतना क्या थोड़ा है ! क्या आप मिंहरबानी करके यह बतलाएंगी कि आप कौन कौनसी ज़ुबान में दख़ल रखती हैं ?"

सौसन,—"हज़रत ! मैं कुछ भी नहीं, जानतीं।"

याकूब,—"आपको मेरे सर की क़सम, सच बतलाइए।"

सौसन,—"अरबी, फ़ारसी, तुर्की, रूमी, और हिन्दुस्तानी ज़ुबान में कुछ कुछ जानती हूँ।"

याकूब,-"वाह, तब तो आप बहुत कुछ जानती हैं; और इस

लिये मुझे निहायतही खुशी हासिल हुई कि जितनी ज़ुबान मैं जानता हूँ, आप उनमें से किसी ज़ुबान से भी महरूम नहीं हैं।"

सौसन,—"आप इस किताब को पढ़ चुके हैं?"

याकूब,—"कई मर्तबः।"

सौसन,—"ख़ैर तो लाइए, फ़ुर्सत के वक्त मैं इसे देखूंगी; आप को इसकी कोई जल्दी तो नहीं है?"

याकूब,—"नहीं, कुछ भी जल्दी नहीं है! आप दिलजमई के साथ इसे देखें। हां! अगर मुझे बीच में इसकी कुछ ज़रूरत होगी तो आपसे मांग लूंगा।"

इतनेही में बाग़ से सब आदमियों के बाहर हो जाने के लिये चोबदार पुकारने लगा, जिसकी आवाज़ सुनकर सौसन और याकूब खड़े होगए और सौसन ने घबरा कर कहा,—

"ओफ़! बातों में ज़रा न मालूम हुआ और बेगम साहिबा के बाग़ में आने का वक़्त हो गया!"

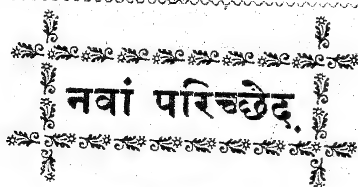
याकूब,—"हां अब मैं भी बाग़ से बाहर जाता हूं। क्या मैं इस बात की उम्मीद रक्खूं कि फिर भी मुलाक़ात नसीब होगी!"

सौसन,—"अगर याद रखिएगा तो ज़रूर मुलाक़ात होगी, वरन इसकी क्या उम्मीद है?"

याकूब,—"यह तो आप ज़ख़्म पर नमक छिड़कने लगीं।"

निदान, फिर दोनों ने एक दूसरे का हाथ चूमा और दोनों दो ओर से निकल गए। किताब लिए हुई सौसन जल्दी जल्दी महल में पहुंची और याकूब ख़ाली हाथ बाग़ के बाहर चला गया।





नवां परिच्छेद.

आंखें लड़ीं ।

" क़यामत है, किसीको प्यार करना इस ज़माने में ।
क़ज़ा का सामना रक्खा हुआ है, दिललगाने में ॥
यही आलम रहे, बस मौसिमे गुल का ज़माने में ।
रहें आबाद बुल बुल, अपने अपने आशियाने में ॥"

(सवा)

"अल्लाह ! वह बुलबुल, जो अभी इस डाल पर बैठी बैठी चहक रही थी; किधर उड़गई ! अफ़सोस ! बाद मुद्दत के एक दिलगी नसीब हुई थी, बदकिस्मती ने उसे भी ज़ियादह देर तक क़ाइम न रहने दिया ।"

दिन के दो बजे के समय शाही बाग में एक लता-मंडप के अन्दर संगमर्मर की चौकी पर बैठा हुआ; अयूब वहीं पर डाल पर बैठी बैठी एक चहकती हुई बुलबुल की सुरीली आवाज़ सुन रहा था । थोड़ी देर में कुछ आहट पाकर बुलबुल उड़ गई । और अयूब ने ऊपर कहे हुए जुमले को बड़े खेद के साथ कहा । चट किसीने लताओं की ओट से उसकी बात का यह जवाब दिया,—

" बुलबुल के एवज़ में गुल से दिल शाद करना क्या नामुनासिब होगा !"

यह आवाज़ बुलबुल की आवाज़ से भी सुरीली और नज़ाकत से भरी हुई थी, जो किसी नाज़नी के गले की मालूम देती थी; उसे सुन कर अयूब चिहुंक उठा और चौकी पर से उठ इधर उधर देखने लगा; पर उसे कोई दिखलाई न दिया । आख़िर, वह फिर बैठ गया और कहने लगा,—

" अल्लाह ! क्या गुल में भी ऐसी जानदार, सुरीली आवाज़ का होना मुमकिन है ?"

फिर किसीने लताओं की ओट से जवाब दिया,—

" खुदा के फ़ज़ल से ऐसा होना मुमकिन है; क्योंकि अगर

ऐसा न हो तो फिर यह सिफत गुलबदन में क्योंकर आवे!"

अयूब,—"लिल्लाह! आप कोई हों, अगर कोई हर्ज वाक़ः न हो तो बराहे मेहरबानी सामने आइए; यों छिपकर निशाना मारना मुनासिब नहीं!"

फिर किसीने कहा,—"वल्लाह, क्या कहना है! जान न पहिचान बड़ी बी सलाम! अजी हज़्रत? आपसे और मुझसे क्या ताल्लुक़ है, जो मैं आपके सामने अपने तईं ज़ाहिर करूं?"

अयूब,—"खुदा के वास्ते मुआफ़ कोजिएगा। शुरू शुरू छेड़छाड़ आपही ने निकाली थी, वरन बन्दा कुछ न कहता। ख़ैर, तो क्या मैं इस बात की उम्मीद करूं कि आप मुझे मुआफ़ करेंगी!"

फिर किसीने जवाब दिया,—"मुआफ़ी! मुआफ़ी चाहिए आप को! बिहतर! मुआफ़ो के एवज़ मे आप क्या ज़रीबाना देंगे।"

अयूब,—"हज़्रत! अपनी औकात के मुआफ़िक सभी कोई कुछ न कुछ देताही है। लिल्लाह! बंदा भी अपनी गुलामी हुजूर की नज़र करेगा।"

फिर किसीने कहा,—"अल्लाह आलम! इस जवाब का तर्ज़ तो देखो?"

अयूब,—"ख़ैर, आपही कुछ फ़र्माएं कि फिर किस ढब से यह मामला तय किया जाय?"

फिर किसीने जवाब दिया,—"क्या, इस बात का फैसला आप मेरी मर्ज़ी पर छोड़ सकते हैं।"

अयूब,—"बिला उज़्र।"

फिर आवाज़ आई,—"बग़ैर समझे बूझे, आप ऐसा वादा किस उम्मीद पर कर रहे हैं?"

अयूब,—"बस, ज़ियादह नख़रे न कीजिए, बराहे मेहरबानी अपना रुख़सार दिखलाकर दिलेनाशाद को शाद कीजिए। अगर मेरी अक्ल मेरे साथ दग़ा नहीं कर रही है तो मैंने आवाज़ से अब आपको बख़ूबी पहचान लिया। खुदारा, आइए, तशरीफ़ लाइए; अब इस तरह टट्टी की ओट में अपने तईं छिपाए रहना, या सामने न आकर दूर ही से यों तीरंदाज़ी करना क्या आपको लाज़िम है?"

फिर आवाज़ आई,—"अख़्वा! आख़िर, आपका इरादा क्या है?"

अयूब,—"सुनिए,—

" चश्मे फ़ैयाज़ से हमको जो इशारा हो जाय।
नाम हो आपका, वो काम हमारा हो जाय।"

फिर आवाज़ आई,-" अय साहब!—
" फ़क़त चार दिन की य, है, जाहो हशमत।
ज़माना कहां, आशना है किसीका॥"

अयूब,-(ठंढी सांस खैंचकर) "अल्लाह! अल्लाह! यह नाज़? खैर न आइए और यो हीं जला जला कर जान लीजिए; पर याद रखिए कि,—

" यही हैं चालें अगर तुम्हारी, तो देखना मर मिटेंगे हमभी।
जहां पड़ेगा क़दम तुम्हारा, वहीं हमारा मज़ार होगा॥"

आवाज़ आई,——
" नक़्द दिल तेरा सनम! जब तक न पाएंगे।"
फिर किस उम्मीद पर, कहो, हम दिल लगाएंगे?"

अयूब,-" लीजिए, हाज़िर है, ख़रीद लीजिए।"

आवाज़ आई,-" क्या क़ीमत लीजिएगा?"

अयूब,-" वह भी बतलादूं? अच्छा सुनिए,-
" फ़कत एक बोसे पे देता हूं दिल को।
न समझो कि सौदा गरां बेचता हूं॥
तुम्हें जो पसंद आए, हाज़िर है, लेलो।
दिलो, दीनो, नामो, निशां, बेचताहूं।
ज़रा तो लगो आ, गले हंस के मेरे।
मुहब्बत में दोनों जहां बेचता हूं॥"

इस पर क़हक़हे के साथ आवाज़ आई,-"मगर जो मैं ज़बर्दस्ती दिल छीनलूं और उसके एवज़ में आपको फ़क़त अंगूठा दिखला दूं, तो?"

अयूब,-" अल्लाह! आपका ऐसा इरादा है!!! अफ़सोस! खैर, तो साहब-
" अगर छीन कर तुमको लेना हो, लेलो।
न दिल बेचता हूं, न जां बेचताहूं॥"

इसके बाद फिर क्या हुआ! फिर यह हुआ कि अयूब ने अपने सामने एक परीजमाल को खड़े देखा जिसे देखतेही वह उठ खड़ा हुआ; पर घबराहट, खुशी, डर और कलेजे की धड़कन से उसकी

ज़बान तालू से ऐसी चिपक गई थी कि उससे कुछ भी बोला न गया। यही हाल उस परी का भी था कि जब तक वह आड़ में थी, बेधड़क छेड़छाड़ की बातें करती रही, पर जब वह अयूब के सामने आई, उसकी भी ज़ुबान बंद होगई और वह कठपुतली की भांति अयूब के सामने नीची गर्दन किए खड़ी खड़ी ज़मीन की ओर निहारने लगी। कुछ देर तक उन दोनों का यही हाल रहा, पर एकाएक उस सुंदरी ने ज्योंही आंखें उठाईं कि उसकी आंखें अयूब की आंखों से बेतरह लड़-पड़ीं; किन्तु लाचारी से उस लजीली सुन्दरी को ही अपनी आंखें नीची कर लेनी पड़ीं। योहीं जब दो चार बार आपस में नैनों के वार चल चुके, तब कुछ साहस पाकर अयूब ने उस सुन्दरी का हाथ अपने दोनों हाथों में लेलिया और बड़ी आजिजी के साथ कहा,—

"प्यारी! गुलशन! यह क्या सुपना है! या वाक़ई मैं इस घड़ी आपको अपने रूबरू देख रहा हूं?"

गुलशन का हाथ अयूब के दोनों हाथों के बीच में पड़ कर कांप रहाथा। वह हया के दर्या में डूबने उतराने लग गई थी और उसने बड़ी कठिनाई से केवल इतना ही कहा,—

"खुदा करे, यह सुपना ताज़ीस्त क़ाइम रहे।"

फिर वे दोनों कुछ देर तक चुपके खड़े रहे; और न जाने कबतक वे योहीं चुपचाप खड़े रहते, पर लताओं की झुरमुट की ओट से किसी के छींकने और साथही खखारने की आवाज़ आई, इससे वे दोनों चौकन्ने हो, इधर उधर देखने लगे। गुलशन ने अपना हाथ अयूब के हाथों के बीच से अलग कर लिया और अयूब ने इधर उधर देखकर कहा,—

"यह किसके छींकने, या खखारने की आवाज़ है?"

गुलशन,—"मैं इस आवाज़ को पहिचान न सकी कि किसकी है, मगर—"

अयूब,—"क्यों? रुक क्यों गईं?"

गुलशन,—(सिर झुकाए हुई) "अगर किसीने हमलोगों को देख लिया हो और जान बूझकर छींका या खखारा हो, तो!!!"

अयूब,—"यह मुमकिन है; अच्छा, आप थोड़ी देर यहींपर ठहरी रहें, मैं फ़ौरन इस झाड़ी में घुस कर देखता हूं कि कहींपर

कोई छिपा हुआ तो नहीं है ! "

इसका जवाब गुलशन कुछ दिया ही चाहती थी कि उसके मुहं की बात मुहं में ही रह गई और लताओं की झुरमुट में से यह आवाज़ आई,—

" इस वक्त नई माशूक़ा को छोड़कर उसके आशिक को अपने तईं किसी दूसरी उलझन में डालना क्या लाज़िम है ? "

केवल इतना ही नहीं, बलिक ऊपर लिखे हुए जुमले के ख़तम होते ही क़हक़हे की आवाज़ भी सुनाई दी; इसलिये उनदोनों आशिक माशूकों के डर, घबराहट और अचरज की सीमा न रही। अयूब ने धीरे से कहा,—

" यह आवाज़ तो किसी औरत की मालूम देती है ! "

गुलशन,–(धीरे से) "ठीक है, पर मुझे ऐसाभी मालूम होता है कि जिसने यह जुमला कहा है, उसने जान बूझ कर इसलिये अपने गले को दबाकर कहा है जिसमें आवाज़ पहिचानी न जाय।"

अयूब,–(धीरे धीरे) " यह तो आपने ख़ूब ही बारीकी निकाली ! बाक़ई ऐसी ही बात है; ख़ैर तो अब क्या किया जाय ? "

गुलशन,–(आँखों में आँसू भर कर धीरे से) " या इलाही ! अब क्या होगा ! अगर किसी बांदी ने यह हर्कत देखली हो और वह अगर इसकी ख़बर को बेगम साहिबा के कानों तक पहुंचाए तो क्या होगा ? "

अयूब,–(घबरा कर) " तो क्या होगा, प्यारी, गुलशन ! "

गुलशन,–(कांपती हुई, धीरे धीरे) " खुदा न करे कि यह ख़बर बेगम के कानों तक पहुंचे, वर न मेरे और आपके धड़ पर सर क़ायम न रहेगा। "

अयूब,–(धीरे से) " इलाही ! तूही ख़ैर कर; मगर, दिलरुबा, गुलशन ! यह क्या कोई ऐब की बात है, कि इस पर बेगम साहिबा इतनी नाराज़ होंगी कि हमलोगों के सर तक काट डालने पर आमादा हो जायंगी ? "

गुलशन,–(धीरे) " खुदा करे, यह ख़बर हर्गिज़ उनके कानों तक न पहुंचे, वर न सर की ख़ैर नहीं। "

निदान, उस समय उन दोनों का जी इतना घबरा गया था कि थोड़ी देर तक दोनों ज़मीन की ओर निहारते हुए चुपके खड़े रहे;

फिर गुलशन ने डबडबाई हुई आंखों से अयूब की ओर निहार कर धीरे से कहा,—

" प्यारे, अब मैं यहां से जाती हूं, क्योंकि मुझे चुपचाप महल से ग़ायब हुए देर होगई है। अगर बेगम साहिबा सोकर उठी होंगी तो मुझे खोजती होंगी; और इस वक्त अब मेरा यहां पर ज़रा भी ठहरना नामुनासिब है। "

अयूब,–(ठंढी सांस भर कर) " ऐसाही इरादा है तो ख़ैर प्यारी!--ख़ुदा हाफ़िज़! "

गुलशन,–" ख़ुदा हाफ़िज़! प्यारे! घबराइएगा नहीं, मौक़ा मिलने पर मैं फिर आपसे मिलूंगी। "

अयूब,–" लिल्लाह! मेरी भी यही आर्ज़ू है; ख़ुदारा, जहांतक जल्द मुमकिन हो, मुलाक़ात हो! "

गुलशन,–" मैं इसके लिये कोशिश करूंगी। "

निदान, गुलशन अयूब के गले लग कर चली गई और उसके जाने पर बेचारा अयूब वहीं पर बैठ कर रोने लगा। थोड़ी देर बाद बाग़ में चोबदार चारो ओर घूम घूम कर यों पुकारने लगा कि,--" बाग़ के काम करनेवालो! जल्द अपना अपना काम अंज़ाम कर के बाग़ के बाहर हो जाओ। सुलताना बेगम साहिबा के तशरीफ़ लाने का वक्त अनक़रीब है "

चोबदार की इस आवाज़ को सुन, सब काम करनेवाले अपना अपना काम पूरा करके एक घंटे के अन्दर बाग़ के बाहर होगए और तब फिर उसके अन्दर सिवाय खोजे और लौंडियों के और कोई मर्द मानस न रह गया; किन्तु बेचारा अयूब, जिस लतामंडप में गुलशन से मिला था, उसकी जुदाई में, वहीं पर बदहवास पड़ा हुआ है और अपने सोच बिचारों में उसका जी इतना उलझ रहा है कि उसके कानों में न तो चोबदार की चिल्लाहट पहुंची और न उसे इसी बात का ध्यान रहा कि,—"अब बेगम साहिबा के आने का वक़्त होगया, इस लिये यहांसे निकल जाना चाहिए। "

पाठकों ने इतना तो अवश्यही जान लिया होगा कि यह गुलशन कोई दूसरी औरत नहीं, बलिक सुलताना रज़ीया बेगम की सहेली ही है। रंगभूमि में अयूब को देखतेही गुलशन उस पर

आशिक होगई थी, और अयूब भी उसे देखतेही उस पर मुश्ताक हो गया था। फिर दो एक बार उन दोनों की दूर दूर से देखा-भाली भी हुई थी; पर दोनों एक दूसरे से आजही मिल सके थे; उसमें भी जो,—'प्रथमग्रासे मक्षिकापातः'–हुआ, उसका न जाने क्या नतीजा होगा,इसे कौन कह सकता है!

यह बात हम अभी कह आए हैं, कि गुलशन के जाने पर अयूब बदहवास हो, वहीं जहां का तहां पड़ा था और उसे दीन दुनियां की कुछ भी ख़बर न थी। उस समय लता की ओट में से किसी औरत ने सिर निकाल कर अयूब की ओर देखा और फिर तुरंत अपना चेहरा छिपा लिया।

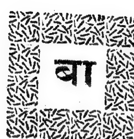


दसवां परिच्छेद

नई जलन।

"कहूं क्या मैं तुमसे कि क्या चाहता हूं।
जफ़ा होचुकी अब बफ़ा चाहता हूं॥
न वस्लत से मतलब न फुर्क़त से मतलब।
फ़क़त मैं तुम्हारी रज़ा चाहता हूं॥"

(सफ़दर)



ग़ में आकर अपनी सहेलियों और बांदियों के साथ रज़ीया बेगम यद्यपि टहल रही थी, पर उसके उतरे हुए चेहरे और चढ़ी हुई आंखों से उसके दिल की बेचैनी साफ़ झलक रही थी, चाहे वह किसी सबब से हो।

यही हाल सौसन और गुलशन का भी था, पर वे बेचारी पराधीन होने के कारन इस बात के लिये हज़ार कोशिश कर रही थीं कि जिसमें इस बेचैनी का हाल बेगम को न मालूम हो; इस लिये उन दोनो के चेहरे से और भी ज़ियादहतर परेशानी की झलक निकल रही थी।

इन तीनों के अलावे रज़ीया बेगम की मुहंलगी बांदी, ज़ोहरा के मुखड़े से भी एक तरह की उदासी उछली पड़ती थी, पर इसमें उन तीनों—अर्थात, बेगम और उसकी सहेलियों—से इतना भेद था कि जिसका एकाएक जान लेना सहजही नहीं बरन असम्भव भी था। वह, यह कि ज़ोहरा के चेहरे की उदासी की छाया में से कुछ क्रोध या डाह के आग की लपट भी कभी कभी इस तरह निकल पड़ती थी, जैसे धुधुंवाती हुई लकड़ी में से निकलते हुए धुएँ के अन्दर से कभी कभी आग की लौर भी निकल पड़ती और फिर उस धुएं में समा जाती है।

टहलते टहलते वे सब एक सुन्दर तालाब के किनारे पहुंचीं और बेगम वहां पर एक संगमर्मर की कुर्सी पर बैठ गई। संदली तिपाईयों पर सौसन और गुलशन बैठीं और बांदियां अगल बगल

और पीछे खड़ी हो गईं। बाग की मालिनों ने आकर झुक झुक कर सलाम किया और फूलों की डालियां, फलों के चंगेर, फूलों के गजरे और गुलदस्ते बेगम के सामने संगमर्मर की चौकी पर सजा दिए, जिनकी खुशबू ने चुटीले दिल-वालियों के जी में और भी बेचैनी पैदा कर दी और वे सभी अपने अपने दिल की चोट का इलाज ढूंढ़ने लगीं।

सौसन और गुलशन की आंख बचा कर ज़ोहरा ने बेगम से आंखें मिला कर कुछ इशारा किया और उसका जवाब इशारे ही में पाकर वह वहांसे चलदी। उसके जाने पर रज़ीया ने मुहं फेर कर सौसन और गुलशन के चेहरे की ओर देखा, पर वे दोनों दिल की बेचैनी से इतनी बदहवास थीं कि उन दोनों में से किसीने भी बेगम को अपनी ओर देख कर घूरते न देखा। उनमें गुलशन तो हथेली पर ठोढ़ी रक्खे हुए किसी पेड़ की डाल पर नज़र गड़ाए हुई थी और सौसन घुटने पर सिर रक्खे हुई धर्त्ती की ओर निहार रही थी। अपनी दोनो सहेलियों के यह ढंग देख, मारे गुस्से के रज़ीया की आंखों में सुर्खी छागई. पर न जाने क्या सोच समझ कर वह चुप हो गई और तालाब में लड़ती हुई मछलियों की बहार देखने लगी।

अच्छा, इन सभों को तो यहीं तालाब के किनारे बैठी रहने दीजिए और चलिए, पाठक! देखें, ज़ोहरा अपना क्या जौहर दिखलाती है।

समय चार बजे दिन का था, जब रज़ीया बेगम बाग़ में टहलने आई थी। सो उससे इशारे ही में कुछ बातें करके ज़ोहरा इधर उधर घूमती फिरती, उस लतामंडप के पास जा पहुंची, जहां पर कुछ देर पहिले अयूब और गुलशन में कुछ प्रेम की बातें हुई थीं। गुलशन तो उसी समय वहांसे चलदी थी, जो अब बेगम के साथ तालाब के किनारे बैठी हुई है, पर उसका आशिक अयूब उसी कुञ्ज के अन्दर अभीतक बदहवास पड़ा हुआ है; जैसा कि हम कह आए हैं।

ज़ोहरा उसी कुञ्ज के भीतर घुस गई और पहिले उसने लता की ओट से अयूब को देखा और फिर धीरे धीरे दबे पांव, वह वहां पर जा खड़ी हुई, जहां पर संगमर्मर के चबूतरे का ढासना

लगाए, अयूब इस ढंग से बैठा था कि उसे न सोना कह सकते हैं, न बैठना; और उस ढंग को न सोए रहने में गिन सकते हैं, न जागे रहने में। उसकी आंखें न खुली हुई हैं, न मुंदी हुई; इसलिये यह कह सकते हैं कि वह गोया; सोया, जागता हुआसा; या जागता, सोया हुआसा था।

कुछ देर तक ज़ोहरा उसे इस तौर से तकती रही, जैसे काबू में पड़े हुए अहेर को बाघिन निहारती है। फिर उसने एक आह सर्द खैंची और कड़ाई के साथ झिड़क कर कहा,-

"तुम कौन हो जी ! जो इस वक़्त, जब कि बेगम साहिबा बाग़ में तशरीफ़ लाई हैं, तुम बेख़ौफ़ यहां पर पड़े पड़े आराम कर रहे हो! क्या तुम्हें अपनी जान प्यारी नहीं है, जो इस वक़्त इस शोख़ी के साथ यहां पर पड़े हुए हो!"

ज़ोहरा ने ये बातें इस तुर्शी के साथ कहीं जिन्हें सुनतेही बेचारा अयूब एक दम चौंक उठा और खड़ा हो, ज़ोहरा के चेहरे की ओर निहारता हुआ बेत की तरह थर थर कांपने लगा। उसकी उस हालत को देख, शायद ज़ोहरा के जलेभुने कलेजे में कुछ तरावट पहुंची होगी, इसलिये वह कुछ देर तक कटीली आंखों से अयूब की ओर घूरती रही और फिर यों बोली,—

"तुम्हारा नाम क्या है ?"

अयूब,—"बन्दे को लोग 'अयूबख़ां' कहते हैं।"

ज़ोहरा,-(जैसे छकु न जानती हो) "एं ! क्या वही अयूब तुम हो, जिसने उस रोज़ याकूब जैसे बहादुर शख़्स के साथ तलवार खेली थी !!!"

अयूब,-" जीहां ! आपने मुझे ठीक पहचाना।"

ज़ोहरा,—"दो घंटे का अर्सा हुआ कि चोबदार ने बाग़ में आवाज़ लगा दी थी कि,—'बेगम साहिबा तशरीफ लाती हैं;' फिर भी तुम यहां पर क्या समझ कर बैठे रहे ? क्या तुम्हें इस बात का ज़रा भी ख़ौफ़ नहीं है कि बेगम साहिबा की मौजूदगी के वक़्त बाग़ के अन्दर जो मर्द पाया जाता है, उसका सर तराशा जाता है !!!"

अयूब,—(घबरा कर) "हज़रत ! यह बात मैं बख़ूबी जानता हूं, मगर आज दर्देसर के बायस मेरी तबीयत ऐसी ख़राब थी

कि दोपहर के पेश्तर ही से मैं यहां आकर पड़ा था। मेरी आंख लग गई थी, इसी बजह से यह कुसूर हुआ, वर न बन्दे की मजाल जो इस वक़्त तक बाग़ के अन्दर ठहरे रहने का इरादा भी करता।"

ज़ोहरा,—"ख़ैर, कुछ भी हो, मगर तुम्हारा यह उज़्र काबिल यक़ीन नहीं है; पस, अब तुम फ़ौरन बेगम साहिबा के रूबरू पेश किए जाओगे और अपनी शरारत के बमूजिब सज़ा पाओगे।"

अयूब,-(अपना सिर पकड़ कर और जमीन में बैठकर) "बी, ज़ोहरा! आप बेगम साहिबा की प्यारी बांदी हैं, अगर आप चाहें तो मुझ जैसे एक नहीं—हज़ारों गुनहगारों की जान बचा सकती हैं। खुदारा, ज़रा रहम कीजिए; कुसूर मुआफ़ कीजिए और खुदा के वास्ते मेरी जान बचाइए; आइन्दे ऐसी ग़फ़लत हर्गिज़ न करूंगा।"

ज्यों ज्यों बेचारे अयूब की घबराहट बढ़ती जाती थी, त्यों त्यों ज़ोहरा मन ही मन खुश होती जाती थी। जब उसने अयूब को एक दम अपने कब्ज़े में पाया तो इस ढंग की बातें करनी शुरू करदीं,—

"बेखुश! तुम्हारे ख़ातिर मैं अपनी भी जान ख़तरे में डालूं! तुमने मुझे निरी नादान बच्ची समझा है क्या! वल्लाह इनके लिये मैं भी अपना सर गवाऊंगी!"

अयूब उसके सामने घुटने टेक कर बैठ गया और दोनों हाथों को ऊंचा करके कहने लगा,—

"लिल्लाह! अब रहम कीजिए; जिसमें मेरी जान बचे, वह कीजिए मैं आपके कदमों पर अपना सर रखता हूं।"

यों कह कर वह ज़ोहरा के पैरों पर गिरा चाहता था कि ज़ोहरा झिझक कर ज़रा पीछे हट गई और कड़ककर बोली,—

"ख़बर्दार! अगर मेरे पैरों को छुआ है तो तुम्हारे हक़ में बेहतर न होगा।"

अयूब,—"खुदा के वास्ते अब रहम कीजिए। ज़रा ग़ौर तो कीजिए कि मेरे मारे जाने से आपको क्या फ़ायदा होगा! चुनांचे जहां तक मुमकिन हो, मुझे बचाइए।"

ज़ोहरा,—"यह ग़ैर मुमकिन है।"

अयूब,-(नाउम्मीदी से) "तो क्या अब मैं किसी तरह नहीं

बच सकता ? "

इस पर ज़ोहरा ज़मीन की ओर देखती हुई कुछ देर तक चुप रही, फिर कहने लगी,—

"सिर्फ़ एकही सूरत है, कि जिससे तुम्हारी जान बच सकती है।"

अयूब,—(जल्दी से) "वह कौनसी सूरत है! बराहे मिहरबानी, जल्द फ़र्माईए।"

ज़ोहरा,—"यही कि किसी ढब से तुमको यहांसे बेदाग़ निकाल दूं और तुम्हारे एवज़ में मैं अपना सर गवाऊं।"

अयूब,—"हर्गिज़ नहीं; मैं यह हर्गिज़ नहीं चाहता कि मेरी जान के बदले एक बेगुनाह औरत की जान मुफ़्त में जाय! इससे तो मैं अपना सिर गंवाना ही बिहतर समझता हूं।"

ज़ोहरा,—"ख़ैर जैसी खुसी तुम्हारी; तो अब मैं तुमको बेगम साहिबा के रूबरू पेश करूं न ?"

अयूब,—(हाथ मलकर) "अफ़सोस! जब कोई चाराही नहीं तो फिर जो मुनासिब समझिए, कीजिए। या इलाही! मेरे नसीब में यह भी था!!!"

अब अयूब की बेचैनी हद्द दर्ज़े को पहुंच गई थी और उसकी आंखों से आंसू बहने लग गए थे। उसकी यह हालत देख कर ज़ोहरा के ओठों पर मुस्कुराहट नाच उठी और उसने यों कहा,—

"सुनिए, साहब! एक दूसरा तरीक़ा मुझे अभी और सूझा है, जिससे आप और हम—दोनों की जाने बच सकती हैं।"

अयूब,—(उसके चेहरे की ओर देख कर) "वह कौनसा दूसरा तरीक़ा आपने सोचा है!"

ज़ोहरा,—"वह, यही है कि आपके साथ मैं भी यहांसे निकल भागूं।"

अयूब,—(ताज्जुब से) "क्या आप भी मेरे हमराह होंगी ?"

ज़ोहरा,—(उसे घूरती हुई) "सिवा इसके और कोई सूरत नहीं है कि आपके धड़ पर सर कायम रह सके! सुनिए, बात यह हैं कि किसी बांदी ने अभी बेगम साहिबा के कानों तक यह ख़बर पहुंचाई है कि,—'एक शख़्स बाग़ की फ़लां जगह पर छिप कर बैठा हुआ है और ओट में से औरतों को तक रहा है।' इस ख़बर

को पाते ही बेगम साहिबा ने कई बांदियों को बाग़ के फाटकों पर इसलिये भेज दिया है कि वे इस कोशिश में लगी रहें जिसमें चोट्टा भागने न पावे। एक लौंडी जल्लाद के बुला लाने के लिये भेजी गई है और मैं इस वास्ते यहां भेजी गई हूं कि आपको गिरफ़्तार करके बेगम साहिबा के रूबरू फ़ौरन पेश करूं। अब बतलाइए, इसमें मेरा क्या चारा है, या मैं बेगम के गुस्से या जल्लाद की तल्वार से आप को क्योंकर बचा सकती हूं! मगर नहीं, आपके रोने गिड़गिड़ाने या आर्ज़ू मिन्नत करने और आपकी नौजवानी वो खूबसूरती पर ख़याल करने से मेरे दिल में हमदर्दी ने जगह की है; इस लिये बहुत कुछ ग़ौर करने पर फ़कत एक यही सूरत नज़र आती है कि अब अगर आपकी जान बचाऊं, तो आप के साथही मुझे भी यहांसे भागना पड़ेगा, वर न और किसी तौर से आपकी जान नहीं बच सकती।"

ज़ोहरा की बातों को अयूब बड़े ग़ौर के साथ सुनता और उस की ओर देखता रहा, और जब वह कहचुकी तो उसने कहा,—

"मगर, बी ज़ोहरा! भला, यह क्यों कर मुझे गवारा होगा कि मेरी वजह से आपको शाही दर्बार छोड़ना पड़े।"

ज़ोहरा,—"हर्ज क्या है? क्या जिसकी मैं जान बचाऊंगी या जिसके ख़ातिर मैं शाही महलसरा से निकल भागूंगी, उसके दिल में मेरा कुछभी ख़याल न होगा और वह मेरी पर्वरिश का ख़याल अपने जीसे एक दम दूर कर देगा।

अयूब,—"आप जानती हैं कि मैं कोई अमीर शख़्स नहीं, बल्कि एक अदना गुलाम हूं और गुलामी करके ही अपनी ज़िन्दगी के दिन पूरे करता हूं; चुनाँचे अगर आपको मैं अपने हमराह ले भी चलूं तो क्योंकर आप का गुज़ारा मेरे साथ हो सकेगा?"

ज़ोहरा,—"इस बात की फ़िक्र आप ज़रा न करें। मैं इतनी दौलत अपने साथ ले चलूंगी कि ताज़ीस्त रुपए पैसे की कमी न होगी और अमीराना ढंग से दस लौंडी गुलामों को रख कर बड़े चैन से मेरी और आपकी गुज़रेगी।"

ज़ोहरा की इस बात ने अयूब के ज़िगर में मानों ज़हरीला तीर मारा, जिसकी जलन से वह तड़प उठा और कुछ देर तक चुपचाप ज़मीन की ओर तकता रहा। उसके इस ढंग को ज़ोहरा

ने भली भांति समझा और भीतर ही भीतर ताव पेच खा कर उसने कहा,—

"लिल्लाह ! अब जो कुछ इरादा आपका हो, उसे जल्द ज़ाहिर कीजिए, क्योंकि आपसे बातें करने में ज़ियादह देर होगई, इसलिये अब मैं यहां नहीं ठहर सकती।"

अयूब,—"अगर मैं इस बात को मंजूर कर भी लूं तो क्या आप अभी मेरे साथ चल खड़ी होंगी?"

ज़ोहरा,-(खुश होकर) "तुरंत नहीं, क्योंकि कुछ देर के वास्ते मुझे इसलिये यहां ठहरना पड़ेगा कि मैं अपनी जमा पूंजी को अपने हाथ करलूं तो यहांसे भागूं।"

अयूब,—"आपने ठीक कहा, मगर तब तक क्या मैं भी यहीं रहूंगा, और दूसरी बांदी या खोजे यहां आकर मुझे गिरफ़्तार न कर लेंगे?"

ज़ोहरा,—"नहीं, आपको अब यहां पर एक लहज़े भी न ठहरना पड़ेगा। कौन ठिकाना, अगर कोई दूसरा शख्स यहां आ जाय, तब तो आप बेतरह बला में फंस जायगे; इसलिये आपको मैं अपने साथ अभी एक ऐसे ठिकाने पर ले चलती हूं कि जहां पर आप बिलाख़ौफ़ कुछ देर तक आराम करेंगे और आधी रात के वक्त मैं आपको साथ लेकर बेगम को अंगूठा दिखलाती हुई यहां से निकल चलूंगी।"

अयूब,—"मगर इतनी तरद्दुद न उठा कर अगर एक काम आप करें तो आपको भी मेरे लिये यहांसे न भागना पड़े और मैं भी अपनी जान बड़ी आसानी से बचालूं।"

ज़ोहरा,—(चिहुंक कर) "यह क्यों कर ?"

अयूब,–"सुनिए,—बवजह तबीयत ख़राब रहने के मैं यहां पर खाली हाथ आया था, अगर मिहरबानी करके आप मुझे अपने हाथ की यह तल्वार देदें तो मैं एक नहीं, हज़ार बेगम और जल्लादों के आगे से ब आसानी बेलाग निकल जा सकता हूँ?"

यह बात सुन कर ज़ोहरा सन्नाटे में आगई, और उसे अयूब की इस बात पर ज़रा भी ताज्जुब न हुआ। उसके तल्वार का जौहर तो वह भली भांति देख चुकी थी; पर उसने कुछ सोच समझ कर कहा,—"अफ़सोस है, कि मैं अब आपकी इस मदद के करने

काबिल न रही। ”

अयूब,—(ताज्जुब से) “ क्यों ? ”

ज़ोहरा,—“ इसलिये कि इस तल्वार को, जो मेरे हाथ में है, मैं आपको इसलिये नहीं दे सकती कि इस पर मेरा नाम खुदा हुआ है; और दूसरी तल्वार लाने के वास्ते मुझे महल सरा तक जाना पड़ेगा, मगर अब मैं इस जगह से हट नहीं सकती, वर न आपकी जान ख़तरे में आ जायगी। ”

अयूब,—“ वल्लाह, अभी तो आप मुझे यहांसे हटा कर कहीं पर ले जाना चाहती थीं न ? ”

ज़ोहरा,—“ बेशक, इस बात से मैं इन्कार नहीं करती और उस मुकाम की,-जहां पर मैं आपको लेजाया चाहती हूं-राह यहीं पर है। ज़रा आप यहांसे हटिए तो ? ”

यों कह कर ज़ोहरा ने अयूब को उस संगमर्मर की चौकी के पास से हटाया, जिस पर कुछ देर पहिले वह बैठा था, या जिसका ढासना लगाए हुए था। उसे उस चौकी के पास से हटा कर ज़ोहरा ज़मीन में बैठ गई और फिर उसने उस चौकी के पास बने हुए एक संगमर्मर के चबूतरे की न जाने कौनसी कल दबाई कि एकाएक, हलकी आवाज़ के साथ संगमर्मर के चबूतरे के ऊपर वाला ढाई हाथ लंबा और दो हाथ चौड़ा पत्थर भीतर की ओर झूल गया और वहां पर एक सुरंग दिखलाई दी। यह हाल देख अयब दंग हो गया और उसने मन ही मन इस बात का निश्चय कर लिया कि,-- “ ज़ोहरा मामूली औरत नहीं है और इसके हाथ से निकल भागना भी आसान नहीं। ”

ज़ोहरा,—“ लिल्लाह, अब आप जल्द इसके अन्दर चलिए। आइए, इस सुरंग में उतरने के लिये सीढ़ियां बनी हुई हैं, उनकी मदद से नीचे आप उतर जाइए।

अयूब,—“ वल्लाह, क्या अकेला मैं ही आगे चलूं ! ”

ज़ोहरा,-“ नहीं, भई ! मैं भी आपके पीछे पीछे चलती हूं। ”

अयूब,-“ मगर, नहीं, बी, ज़ोहरा ! यह रास्ता आपका जाना हुआ है, इसलिये पेशतर आपको कदम बढ़ाना चाहिए। ”

ज़ोहरा,--(झल्लाकर) “ अह ! ज़िद न कीजिए; इस बेशकीमत वक्त को फ़ज़ूल ज़ाया न करिए, चलिए, जल्द इसके अन्दर क़दम

रखिए।"

अयूब,—" जब तक आप आगे तशरीफ़ न ले चलेंगी, बन्दः हर्गिज़ इसके अन्दर क़दम न रक्खेगा।"

ज़ोहरा,—(तुर्शी से) " तो क्या तुमको मुझपर भरोसा नहीं है ? और तुम क्या अपने दिल में यह सोच रहे हो कि,–'यह औरत मुझसे दग़ा करेगी ?' अजी, हज़रत ! अगर मुझे आपके साथ बुराई ही करनी होती तो मैं अब तक आपको बेगम साहिबा के सामने पेश न कर दिए होती ?"

अयूब,—" आपका फ़र्माना बजा है और यह बात मैं बखूबी समझ रहा हूं कि आप इस वक्त जो कुछ कर रही हैं; फ़क़त मेरी बिहतरी के लिहाज़ से; मगर मेरा दिल न जाने क्यों, अब आपका साथ छोड़ना नहीं चाहता।"

ज़ोहरा,–"वल्लाह आलम! अजी ! मैं क्या आपका साथ छोड़ती हूं ! लिल्लाह ! चलिये भी ! क़दम तो बढ़ाइए !"

अयूब,–" पेश्तर आप क़दम उठाइए।"

अयूब की इस ज़िद पर ज़ोहरा को यहां तक गुस्सा चढ़ आया कि उसने जिस तरह उस चबूतरे के पत्थर को अलग किया था, उसी भांति उसे बराबर कर दिया और तब ज़हरीली निगाहों से अयूब की ओर बेतरह घूर कर कहा,–

" कम्बख़्त ! जब कि तेरी मौतही तेरी दामनग़ीर हुई है तो वह क्योंकर किसीके टाले टल सकती है ! ले, हरामज़ादे ! अब अपने किए का एवज़ ले।"

यों कह कर उसने अपने गले में पड़ी हुई सुनहली जंज़ीर में की सीटी उंगलियों में दबाई और वह चाहती थी कि उसे ओठों के बीच में दबाकर बजावे,–कि अयूब ने गिड़गिड़ाकर कहा,—

" ज़रा, एक लहज़े और ठहर जाइए। आख़िर तो अब मुझे मरनाही है, तो एक चीज़ आपकी नज़र क्यों न करदूं कि यह जब तक आपके पास रहेगी, आप मुझ कम्बख़्त की–चाहे किसी ख़याल से हो–याद तो किया करेंगी ?"

यों कहकर अयूब ने अपने कुर्ते के जेब में से एक सुनहली डिबिया निकाली और उसे खोल, और उसके अन्दर से झरबेर के बराबर मोतियों की एक जोड़ी ज़ोहरा के हाथ पर रखदी और कहा,–

" इस करीबउल्मौत कम्बख़्त की यह निशानी आप हमीशा अपने पास रखिएगा । यह निहायत बेशकीमत और नायाब मोती है ।"

अयूब इतनाही कहने पाया था और ज़ोहरा उसे भरपूर देखने भी न पाई थी कि अजीब तमाशा हुआ; अर्थात हाथ की गर्मी पाकर मोती तड़क गया और उसके अन्दर से एक तरह की गर्द निकलकर ज़ोहरा के नाक के छेदों में इस तेज़ी के साथ घुस गई, कि जिससे एक छींक मार कर वह ऐसे झोंक से गिरने लगी थी कि यदि अयूब उसे न सम्हालता तो उसका सिर संगमर्मर के चबूतरे या चौको पर गिर कर चकनाचूर हो जाता । आख़िर, अयूब ने उसे वहीं ज़मीन में लिटा दिया और उसकी तलाशी ली; पर उसके पास ऐसी कोई चीज़ न निकली, जो अयूब के काम की होती; इसलिये उसे उसी दशा में अयूब ने पड़ी रहने दिया और आप उस कुंजबन के बगल वाली उस झाड़ी में घुसा, जिसमें से गुलशन के साथ बातें करने के समय किसीके छींकने, खखारने और ताना मारने की आवाज़ आई थी ।

उस लतामंडप से सटी हुई वह झाड़ी बांसों और लताओं की थी, जो बहुत ही घनी और दूर तक फैली हुई थी । यद्यपि अभी सूरज डूबने में कुछ देर थी, पर उस झाड़ो में हाथ से हाथ नहीं सूझता था । आखिर, अयूब किसी किसी तरह उस झाड़ी के पार हुआ और चारो ओर देख, निराला पा, एक चोर दर्वाज़े की राह, बाग से बाहर होकर अपने ठिकाने पर पहुंच गया ।

पाठक, इधर का तो यह हाल था, अब उधर का सुनिए कि ज़ोहरा के जाने बाद घंटे भर तक बेगम चुपचाप बैठी बैठी तालाब की ओर, और कभी कभी अपनी सहेलियों की ओर, जो अब तक उसी हालत में थीं, निहारती रही; किन्तु जब एक घंटा बीत गया और ज़ोहरा न लौटी, तब तो बेगम कुछ घबराई और उसने लौंड़ियों को हुक्म दिया कि,—" ज़ोहरा को जल्द हाज़िर करो ।"

बेचारी लौंड़ियों को इस बात की क्या ख़बर थी कि ' इस वक्त ज़ोहरा फ़लानी जगह पर बेहोश पड़ी होगी ! ' सो उस ओर तो कोई नहीं गई और इधर उधर झख मार कर सबकी सब लौट आईं और डरते डरते सभोंने दस्तबस्तः अर्ज़ किया कि,—" जहांपनाह !

ज़ोहरा तो कहीं दिखलाई नहीं देती। "

यह सुन रज़ीया बड़ी लाल पीली हुई, पर वह कर क्या सकती थी? क्योंकि जहां पर ज़ोहरा बेहोशी के आलम में पड़ी थी, वह जगह बेगम को भी नहीं मालूम थी; इसलिये वह अपने गुस्से को पी गई और एक लौंडी की ओर देख कर उसने हुक्म दिया कि,-" अयूब को जल्द यहाँ हाज़िर कर। "

"जो, इर्शाद!" कह कर एक लौंडी दौड़ी हुई बाग़ के बाहर, अयूब के डेरे पर पहुंची, जहां पर वह बैठा हुआ कोई किताब देख रहा था। लौंडी को देखते ही वह घबरा कर खड़ा होगया और बोला,-" क्या है? "

लौंडी,-" आपको बेगम साहिबा याद करती हैं। हुक्म है कि फ़ौरन बाग में हाज़िर हों। "

" बेहतर, मैं चलता हूं, " यों कह कर अयूब ने अपनी तल्वार उठा ली, और कुर्ते के जेब में एक डिबिया और एक छोटा सा तमंचा रख कर वह लौंडी के साथ हो लिया।

सूरज डूब चुका था और रज़ीया बेगम तालाब के किनारे से उठ कर एक सजी हुई संगमर्मर की बारहदरी में मसनद पर आ बैठी थी। गुलशन और सौसन भी उसके अगल बगल अदब से बैठी हुई थीं और कई बांदियां तल्वारें लिये मसनद के पीछे अदब के साथ खड़ी थीं। शमादान में मोमी बत्तियां जल रही थीं और अगर की खुशबू बारहदरी में फैली हुई थी। इतने ही में लौंडी ने वहीं पहुंच, आदाब बजा लाकर दस्तबस्तः अर्ज़ किया,-"जहांपनाह! अयूबख़ां दरेदौलत पर हाज़िर है?"

रज़ीया,-" तूने उसे कहां पाया? "

लौंडी,-" हुज़ूर! उसके डेरे पर। "

रज़ीया,-" हूं! वह क्या करता था? "

लौंडी,-" हज़रत! वह कोई किताब देख रहा था।"

रज़ीया,-" अच्छा, उसे हाज़िर कर। "

" जो इर्शाद; " कह कर लौंडी लौटी और बाहर आकर अयूब को बेगम के सामने लेआई। अयूब ने आते ही ज़मीन चूम कर शाहानः आदाब बजाया और हाथ जोड़ कर सिर झुकाए हुए वह सामने खड़ा रहा। बेगम ने सिर उठा और उसके चेहरे की ओर

नज़र गड़ा कर देखा; फिर उसने गुलशन के चेहरे पर नज़र डाली, जो सिर झुकाए हुई शान्त भाव से बैठी थी, पर उन दोनों-अयूब या गुलशन—के चेहरे से कोई बात ऐसी नहीं पाई गई, जिससे किसी तरह का शक किया जाता; इसलिये बेगम का गुस्सा, जो सातएं आस्मान पर चढ़ा हुआ था, कुछ उतर गया और उसने अयूब से कहा,—

"इस वक़्त मैंने तुझे, अयूब ! इसलिये तलब किया है कि क्या तूने कभी किसीके सामने इस बात की ख़ाहिश ज़ाहिर की थी कि,-'अगर किसी सूरत से शाही कुतुबख़ाने से किताबें मिल सकतीं तो क्या ही अच्छा होता ! "

अब अयूब की जान में जान आई; क्योंकि पहले वह इस बेवक़्त बेगम के बुलाने को जैसा ख़तरेनाक समझता था, वैसा उसने अब न देखा; इसलिये उसने मन ही मन इस बात का निश्चय कर लिया कि,—'अभी तक ज़ोहरा की बेहोशी का हाल किसीको मालूम नहीं हुआ है, और न अभी तक किसीने उसकी ख़बर ही ली है, या कोई उसके पास पहुंचा है।' ये सब बातें उसने छिन भर में सोच लीं और बेगम के सवाल का जवाब तुरंत दिया,—

"जी हां, जहांपनाह ! मैंने ऐसी ख़ाहिश अपने उस्ताद के आगे एक मर्तबः ज़ाहिर की थी। "

रज़ीया,-"ख़ैर, जो हो, मैंने यह खबर पाई थी, इसलिये तुझे तलब किया कि,-क्या तू कुतुबख़ाने का मुन्शी हुआ चाहता है ?"

यह सुन, ज़मीन चूम कर अयूब शाहानः आदाब बजा लाया और बोला,-

"जहांपनाह ! गुलाम पर निहायत मिहरबानी होगी, अगर ऐसा वहदा ताबेदार को बख़शा जायगा।"

रज़ीया,—"ख़ैर इस वक़्त तू रुख़सत हो, किसी रोज़ 'मुन्शी कुतुबख़ानः' की खिलअत और पर्वाना तुझे दिया जायगा।"

इतना सुन कर अयूब ने ज़मीन चूम कर सलाम किया और खुशी खुशी वह वहां से चला और बाग़ से बाहर हो, अपने डेरे पर पहुंचा। एक बेर उसने अपने जी में यह सोचा कि,—'एक नज़र ज़ोहरा की कैफ़ियत देखता चलूं;' पर वैसा करना उसने मुनासिब न समझा; क्योंकि जो लौंडी उसे बुला लाई थी वह बाग़ के फाटक तक उसके पीछे पीछे गई थी।

ग्यारहवां परिच्छेद.

इश्क या फ़ज़ीहत।

" ये मुहब्बत, ये इनायत, ये इतायत कैसी ?
ये खुशामद, ये लजाजत, ये समाजत कैसी ?
इस खुशामद का मोअम्मा नहीं मुझ पर खुलता !
ग़ौर करता हूँ, मगर कुछ न समझ में आता !"
(क़लक़)

क्या पाठकों को वह बात याद है, जो इस उपन्यास के चौथे परिच्छेद में रज़ीयाबेगम ने अपनी सहेली से कही थी कि,–" सौसन! इस वक़्त मैं तेरी उन दलीलों से, जो कि तू गुलशन के साथ कर रही थी, निहायत खुश हुई हूं और खुदा चाहेगा तो बहुत जल्द मैं तेरी ख़ाहिश बमूजिब उन गुलामों को गुलामी से आज़ाद कर शाही दर्बार में कोई अच्छा वहदा दूंगी, जिससे वे दोनों मेरी नेकनीयती, क़दरदानी, फ़ैयाज़ी और ग़रीबपर्वरी को ताज़ीस्त न भूलेंगे।"

और यह भी पाठकों को याद होगा कि पांचवें परिच्छेद के अन्त में बेगम की बेकली कैसी दिखलाई गई है कि बार बार करवट बदलने पर भी उसे नींद नहीं आती थी। अस्तु हम उसीके दूसरे दिन की एक घटना का हाल यहां पर लिखते हैं, जिससे पाठकों को त्रैलोक्यमोहिनी, परमस्वाधीना, भारताधीश्वरी, पूर्णयुवती और कुमारी रज़ीयाबेगम के स्वतंत्र स्वभाव का बहुत कुछ परिचय मिलेगा।

प्रातःकाल का समय है और सूरज निकलने में अब थोड़ी ही देर है। रात को ज़ियादह ठंढ पड़ने से चारोंओर कुहरा छाया हुआ है, किन्तु ऐसे अवसर में भी तड़के की ठंढी और नीरोग हवा खाने और बाग में चहलक़दमी करने का जिसका जी न चाहे वह मनुष्य ही नहीं है।

पलंग से उठते ही रज़ीयाबेगम ने हाथ मुंह धोकर कपड़े बदले

और सादी परन्तु बेशकीमत पोशाक पहिरकर वह अपनी सहे-लियों के साथ बाग में टहलने आई। हुक्का लिये हुई ज़ोहरा भी उसके साथ थी।"

बेगम साहिबा के बाग में तशरीफ़ लाने की ख़बर पहिलेही से कर दी गई थी, इसलिये बाग़ के काम करने वाले बाग़ से बाहर हो गए थे; फ़क़त मालिनें बड़ी मुस्तैदी के साथ बाग़ की सफ़ाई और दुरुस्तगी के काम में लगी हुई थीं।

प्रताप या प्रभुत्व ऐसा बिलक्षण है कि जिसके कारण इतने तड़के बाग में आने पर भी बेगम ने जिधर नज़र उठाकर देखा, उधर ही सफ़ाई देख पड़ी और यही जान पड़ने लगा कि अभी अभी बाग़ में सफ़ाई की गई है।

बाग़ में आते ही सब मालिनों ने बदस्तूर आ आकर सलाम किया और फूलों की डालियां तालाब के किनारे, जहां पर बेगम बाग में घूम फिर कर ज़रा बैठकर सुस्ताती थी, एक संगमर्मर की चौकी पर चुन दीं और फिर सब अपने अपने कामों में लग गईं।

बेगम बाग़ में आकर कुछ देर तक इधर उधर टहला की; फिर उसने गुलशन और सौसन से कहा,—

"सखी! तुम दोनों आज एक काम करो। वो यह कि तुम दोनों एक दूसरी से अलग होकर बाग़ के जुदे जुदे हिस्से में जाकर खुद अपने हाथों से फूल बीन लाओ और मैं यहां पर गुलेनर्गिस का चुनती हूँ। इस काम के लिये वक्त फ़क़त एक घंटे का दिया जाता है। फिर तुम सभोंके इकट्ठे होने पर इस बात की जांच की जायगी कि ज़ियादह फूल किसने बीने।"

"जो हुक्म हुज़ूर!" यों कहकर सौसन और गुलशन वहांसे चली गईं और बेगम एक मौलसिरी के पेड़ के नीचे एक संगमर्मर की चौकी पर, जिसपर मखमली गद्दी बिछा दी गई थी बैठ गई और उसका इशारा पाकर ज़ोहरा उसके सामने एक संदली चौकी पर बैठी।

रज़ीया ने दो चार कश हुक्के के खैंचे और ज़ोहरा से आँखें मिला कर बड़ी आजिज़ी से कहा,—

"प्यारी, ज़ोहरा! तू क्या यह बात दिल से नहीं चाहती कि,—'मेरी मिहरबान बेगम को खुदा किसी तरह का सदमा न दे!'

ज़ोहरा,--(खड़ी हो कर) " अय ! हुज़ूर ! मैं सदके, मैं कुर्बान ! अय ! तौबः ! सर्कार की बलाएं लूं ! मेरी सर्कार के दुश्मनों का चेहरा आज इस क़दर ग़मगीन क्यों नज़र आता है ? हुज़ूर मेरे तनोबदन के खून का हर एक क़तरा इसी आर्ज़ू में है कि वह अपने तईं हुज़ूर की ख़िदमत में क्योंकर सर्फ़ होकर खुशी खुशी बिहिश्त हासिल करे।"

बेगम ने ज़ोहरा का हाथ थाम कर उसे बैठाया और उसका हाथ अपने हाथों में लेकर कहा,—

" ज़ोहरा, ज़ोहरा ! मेरी प्यारी, ज़ोहरा ! तू यह बात बखूबी जानती है कि मैं तुझ पर कितनी मिहरबान रहती हूं और तेरे साथ वैसा बर्ताव हर्गिज़ नहीं करती, जैसा कि अक्सर लोग अपने लौंडी गुलामों के साथ किया करते हैं।"

ज़ोहरा,--(बेगम के क़दमों में अपना सिर लगा कर) "हुज़ूर ! खुदा करे यह लौंडी इसी क़दम के साये तले अपनी जिन्दगी के दिन पूरे करे और बिहिश्त में भी हुज़ूर ही की कदमबोसी हासिल कर सके।"

रज़ीया,—(उसका सिर उठाकर) " ज़ोहरा ! प्यारी, ज़ोहरा मुझे तेरी बफ़ादारी पर पूरा एतकाद है और यही वजह है कि इस वक़्त मैंने अपनी सहेलियों को यहांसे टाल कर तेरे सामने अपने दिल का पर्दा हटाना चाहा है।"

ज़ोहरा,—" हुज़ूर ! का जो हुक्म हो, उसे लौंडी बसरोचश्म बजा ला सकती है और इस खूबी के साथ कि हवा को भी उसकी ख़बर न हो।"

रज़ीया,—" बेशक ! तू इसी लायक है, तभी तो मेरा दिल मुझ से बारबार यों कह रहा है कि,–' रज़ीया ! अगर तेरा काम कोई बखूबी अंज़ाम दे सकता है तो फ़क़त तेरी बफ़ादार लौंडी ज़ोहरा।' हां ! अगर तूने मेरा वह काम किया तो तू यक़ीन कर कि तुझे मैं अपनी छोटी बहिन के बराबर समझूंगी और तू बड़ी शान शौकत के साथ शाहीमहल में रहेगी। और मेरे बाद अगर महलसरा की किसी औरत की इज़्ज़त की जायगी तो फ़क़त तेरी।"

धन्य, कन्दर्प ! तुम्हारा प्रताप धन्य है कि तुम जिससे चिपटते हो, उसका निजत्व पहिले ही हर लेते हो !!!

निदान, बेगम की इस आशा से ज़रख़रीद लौंडी ज़ोहरा एक दम उछल पड़ी और बेगम के तलवे का बोसा ले, फिर अपनी जगह पर बैठ गई और बोली,—

"हुज़ूर! तो मैं कौनसी ख़िदमत करूं?"

रज़ीया,— (उसका हाथ अपने हाथों में लेकर) "खुदा के वास्ते यह राज़ किसी पर ज़ाहिर न होने पावे। ख़बर्दार! वर न मेरी रुसवाई का कहीं ठिकाना न रहेगा और तू भी बड़ी भारी जिल्लत उठावेगी।"

ज़ोहरा,—"हुज़ूर! मैं अल्लाह को दर्मियान में रख कर और कुरान शरीफ़ की क़सम खाकर कहती हूं कि लौंडी तामर्ग किसी बात को भी किसी पर ज़ाहिर न होने देगी।"

रज़ीया,—"देख, ज़ोहरा! इस बादशाहत, इस हुकूमत, इस शान शौकत और इस मर्तबे को पाकर भी मुझे या मेरे दिल को ज़रा भी चैन या आराम नहीं! यह क्यों! क्या औरत होकर तू इस सवाल का जवाब आसानी से नहीं दे सकती? अच्छा सुन! मैं ही कहती हूं,-देख! प्यारी, ज़ोहरा! किसी भी औरत के लिये एक दिलदार मर्द का होना पहुत ज़रूरी है; क्योंकि अगर किसी खुशमिजाज औरत के पास कोई खूबरू मर्द न हो, या किसी दिल-दार मर्द को कोई हसीन और तबीयतदार औरत मयस्सर न हो तो उस औरत या मर्द की ज़िन्दगी बेकार ही नहीं, बल्कि जंयाल भी हो जाती है।"

ज़ोहरा,—"बेशक, हुज़ूर! यह बात तो बिल्कुल सही है। लौंडी तो कई मर्तबः यह अर्ज़ किया चाहती थी कि हज़रत अपनी शादी करें; मगर मारे खौफ़ के कोई क़लमा ज़बान से बाहर नहीं निकाल सकती थी।"

रज़ीया,-"सुन, ज़ोहरा! शादी के निस्वत जो तूने कहा, यह तेरा खयाल महज़ ग़लत है। अगर तू शाही ख़ान्दान के क़ायदे से बखूबी आगाह होती तो शायद 'शादी' का लफ़्ज जबान से न निकालती। प्यारी, ज़ोहरा! शाही ख़ान्दान के कायदे के बमूजिब शाहज़ादियाँ और मुझ जैसी बदनसीब बेगमों को शादी कहां नसीब है!!! मगर फिर भी दिल शाद करने और तबीयत में नई जान डालने के लिये एक दिलदार शख़्स की निहायत ज़रूरत है; सो

भी इस तरीके पर कि यह बात हमीशा पोशीदा रहे और किसीको इसकी ज़रा भी ख़बर न होने पावे।"

ज़ोहरा,—" वल्लाह, हुज़ूर! यह तो निहायत ही उम्दा तरीक़ा है और इसमें वस्फ़ यह है कि शादी से बढ़कर आज़ादी रहती है और तबीयत में नफ़रत को जगह नहीं मिलती। ख़ैर, तो हुज़ूर ने किस क़िस्मतवर शख़्स को अपनी ख़िदमत के लिये चुना है?"

रज़ीया,—" क्या तू ज़वांमर्द याक़ूब को इस क़ाबिल नहीं समझती?"

ज़ोहरा,—(फड़क कर) " अल्हम्द लिल्लाह! क्यों न हो, हुज़ूर! हज़्रत ने तो ऐसे ला मिसाल बहादुर और ख़ूबरू शख़्स को चुना है कि जिसका जोड़ शायद दुनियां के परदे पर मयस्सर न होगा!!!"

रज़ीया,—" बेशक अब मुझे निहायत ख़ुशी हासिल हुई कि तूने भी याक़ूब ही को पसंद किया।"

ज़ोहरा,—" जी हां, हुज़ूर! आपकी ख़िदमत लायक शख़्स याक़ूब से बढ़कर दूसरा मिलना मोहाल है।"

रज़ीया,—"तो क्या तू कोई ऐसा ढंग निकाल सकती है कि जिस में याक़ूब के साथ मेरी राहरस्म पैदा हो और इस बात की ख़बर किसी चौथे के कानों तक न पहुंचे?"

ज़ोहरा,—" हुज़ूर! ऐसा होना तो बहुत आसान है; मगर वक़्त और जगह ऐसी होनी चाहिए, जहां उस मौके पर किसी ग़ैर शख़्स का गुज़र न हो।"

रज़ीया,—" अच्छा; इस बारे में मैं आज दिन भर ग़ौर करूंगी और शाम को तुझसे, जैसी राय दिल के साथ क़रार पाएगी, उस का हाल कहूंगी।"

ज़ोहरा,—" बहुत ख़ूब!—(ठहरकर) अय, हुज़ूर! अगर जान की अमां पाऊं तो कुछ अर्ज़ करूं?"

रज़ीया,—" प्यारी, ज़ोहरा! अब मैं तेरी जान को अपनी जान से कम नहीं समझती, इस वास्ते अबसे जो तेरा जी चाहे, बिला ख़ौफ़ और बे तकल्लुफ़ी के साथ कहा कर!"

ज़ोहरा,—(बेगम के पैरों पर सिर रख कर) " हुज़ूर! याक़ूब

ख़ां के शागिर्द अयूब को तो आप बख़ूबी पहचानती हैं ?"

रज़ीया,-(उसे उठा कर और हंस कर) " बेशक मैं उसे बख़ूबी पहचानती हूं और मेरी छोटी बहन ज़ोहरा की दिल्लगी के वास्ते याक़ूब का शागिर्द अयूब ही चुना जा सकता है; क्यों ।"

ज़ोहरा,-(शर्माकर और सिर झुकाकर) " जी, हां, हुज़ूर !"

रज़ीया,-" तो तू शौक से अयूब के साथ अपना दिल शाद कर, मगर पेश्तर मेरी दिल्लगी का इन्तज़ाम कर देना तुझे लाज़िम है ।"

ज़ोहरा,-" अय, तौबः ! यह हुज़ूर क्या कहने लगीं ! सरकार जब तक मैं आपको खुश न कर लूंगी, दुनियां की लज्ज़तों को हराम समझूंगी। यह तो मेरा फ़र्ज़ है कि पेश्तर मैं आपके दिल को खुश करूं ।"

रज़ीया,-(उठकर और उसे गले लगा कर) " तो प्यारी, ज़ोहरा ! मैं आज दिन भर इस बात पर ग़ौर करूंगी और शाम को तुझे इस बारे में हुक्म दूंगी कि अब क्योंकर कोई कार्रवाई करनी चाहिए ।"

ज़ोहरा,—(इधर उधर देखकर) " मगर हुज़ूर ! यह काम ब आसानी ख़ातिरख़ाह हो जायगा, ऐसी मुझे उम्मीद नहीं है ।"

रज़ीया,-(घबरा कर) " क्यों, क्यों ?"

ज़ोहरा,—" इसकी वजह यह है कि हुज़ूर की सहेलियों में से सौसन याकूब मियां पर आशिक हुई हैं और गुलशन अयूब पर; और जहां तक मैंने उन आशिक माशूकों के रंग ढंग देखे और उन पर ग़ौर किया, मेरा दिल यही कहता है कि इसमें कामयाबी हासिल करने के लिये बड़ी बड़ी पेचीदा उलझनों को सुलझाना पड़ेगा ।"

रज़ीया,—(हैरान होकर) " हैं ? यह क्या सच है ! ज़ोहरा ! यह तू क्या कह रही है ?"

ज़ोहरा,—" हज़रत ! मैं जो कुछ कह रही हूं, उसमें एक नुक्ता भी ग़लत नहीं है; और अगर हुज़ूर मुझे इजाज़त देंगी तो मैं उन आशिक-माशूकों की दिल्लगी हुज़ूर को दिखला भी दूंगी । "

रज़ीया,-(गुस्से में भरकर) "अगर, ऐसी हरकतें उन कम्बख़्तों की तू मुझे दिखला सकेगी तो मैं फ़ौरन सौसन और गुलशन को हलाक कर डालूंगी ।"

ज़ोहरा,—" ज़रूर ! मैं वह तमाशा सरकार को दिखलाऊंगी, मगर मुआफ़ कीजिएगा,—मेरी यह मजाल नहीं है कि मैं हुज़ूर को कोई सलाह दे सकूं ; मगर हां ! इस बात का कहना मैं मुनासिब समझती हूं कि जब तक हुज़ूर मियां याकूब को अपनी मुट्ठी में न कर लें, बी सौसन या गुलशन को छेड़ना मुनासिब न होगा। आगे हुज़ूर जैसा मुनासिब समझें।

रज़ीया,—(सोचकर) "बेशक, तेरी इस राय की मैं क़द्र करती हूं और उसे अमल में लाना भी बहुत ज़रूरी समझती हूं। ख़ैर तो अब मैं महल में जाती हूं, क्योंकि सौसन और गुलशन फूल बीन कर अब आयाही चाहती हैं।"

ज़ोहरा,—" बेहतर ! मगर जो वे यह पूछेंगी कि,—" बेगम साहिबा कहां गईं; ' तो मैं क्या कहूंगी ?"

रज़ीया,—" तू कह दीजियो कि बेगम साहिबा आज अकेले में बैठकर उस लड़ाई के तय करने के बारे में ग़ौर करेंगी, जो काश्मीर की सरहद पर आज कल हो रही है। इसीलिये वे महल में चली गई हैं और यह हुक्म देती गई हैं कि,—" जब तक मैं किसीको तलब न करूं, मेरे पास आज कोई न आवे।"

ज़ोहरा,—" वल्लाह ! हुज़ूर ने तो अच्छी बन्दिश बांधी हैं !"

रज़ीया,—" क्या, कहूं, ज़ोहरा ! मेरा दिल निहायत बेचैन हो रहा है। ख़ैर तो अब मैं यहांसे जाती हूं और आज मैं मोतीमहल वाली बारह दरी में रहूंगी। तू एक घंटे के बाद मेरे पास उस पोशीदः राह से आइयो, जो बाग़ की उस (कान में बतला कर) जगह से भीतर ही भीतर मोतीमहल तक गई है।"

ज़ोहरा,—" जो इर्शाद।"

निदान, फिर तो रज़ीया अकेली महल के अन्दर चली गई और उसके जाने पर ज़ोहरा ने इधर उधर देखकर बेगम के हुक्के की नली अपने मुंह से लगाई और दो चार दम खैंचकर वह आप ही आप कह उठी ! 'इनशा अल्लाह ताला ! अगर मेरी खुशकिस्मती ने अब मेरा पूरा साथ दिया तो, रज़ीया ! तो मेरा नाम ज़ोहरा कि जो मैं तेरे साथ देहली के तख़्त पर बैठूं। बेगम ! अब तुम जाती कहां हो ! खुदा ने चाहा तो अब जैसा जैसा मैं चाहूंगी; वैसा ही वैसा तुम्हें नाच नचाऊंगी।'

वहांसे बेगम के चले जाने के थोड़ी ही देर बाद सौसन और गुलशन वहां पर आ पहुंची; जहां पर ज़ोहरा संदली चौकी पर बैठी हुई, बेगम का नैचा पी रही थी। सो आहट पातेही वह नैचा छोड़ कर उठ खड़ी हुई और उससे सौसन ने पूछा,-

"सर्कार कहां गईं ?"

ज़ोहरा ने कहा,-"हज़रत ! भला मुझे इस बात की क्या ख़बर है ? मगर हां ! आप दोनों जनी के जाने के थोड़ी ही देर बाद न जाने आपही आप वे क्या सोच कर उठीं और यह कहती हुई तेज़ी के साथ महल में चली गईं कि,-"मुझे काश्मीर की सर्हद की लड़ाई पर ग़ौर करना है; चुनांचे जब तक मैं किसीको न बुलाऊं, आज मेरे पास कोई न आए।"



बारहवां परिच्छेद

इश्क है इश्क!!!

"क़फ़स है, ज़ह्र है, मूज़ी है, क़यामत है इश्क!
क़ह्र है, ज़ुल्म है, बेदाद है, आफ़त है इश्क!
बखुदा बाइसे सदतअनों मलामत है इश्क!
शोलए खिरमने दीनो दिलो ताक़त है इश्क!!!
(आग़ा)



जिस घटना का हाल ग्यारहवें परिच्छेद में लिखा गया है, उसके आगे का हाल इस परिच्छेद में हम लिखते हैं।

आज दिन भर से रज़ीया बेगम अपने सीसमहल में है, और बाग़ से आने पर अब तक अपनी सहेलियों से नहीं मिली है। सिवाय ज़ोहरा के उसके पास कोई नहीं जाने पाता है और सौसन तथा गुलशन के पूछने पर ज़ोहरा उन दोनों को यही जवाब देती है कि,—"सुलताना बेगम साहिबा काश्मीर की सर्हद की लड़ाई पर कुछ ग़ौर कर रही हैं, इस वास्ते आज वह किसीसे मिलना नहीं चाहतीं।"

योहीं धीरे धीरे दिन बीत गया और रात आ पहुंची। यद्यपि रात अंधेरी और जाड़े की थी, पर कामीजनों के लिये ऐसा समय बड़े काम का होता है। सो ज़ोहरा दो तीन घड़ी रात बीतने पर चुपचाप महल से बाहर हुई और बाग़ में होती हुई, बाग़ के बाहरी हिस्से में उस ओर पहुंची, जिधर याक़ूब का डेरा था।

महल से मिला हुआ बाग़ बहुत बड़ा था और वह दो हिस्सों में बंटा हुआ था। जिनमें बाग़ का बड़ा हिस्सा तो महल से सरोकार रखता था और उसका दूसरा या छोटा हिस्सा जो कि लगभग बीस पच्चीस बीघा ज़मीन को घेरे हुए था, मालियों और कई किस्म के लोगों के बर्त्तने में आता था। उसी हिस्से में याक़ूब और अयूब के रहने के लिए भी अलग अलग बंगले बने हुए थे; जिनमें से याक़ूब के बंगले के बाहर पेड़ की ओट में छिपी हुई ज़ोहरा

इस बात का आसरा देख रही थी कि,–"निराला हो तो याकूब से मिले; ' क्यों कि याकूब के पास उस समय अयूब बैठा हुआ था और उन दोनों में किसी बात पर बहस हो रही थी।

निदान, जब रात के ग्यारह बजे, अयूब याकूब से बिदा होकर अपने डेरे पर चला गया और तब ज़ोहरा को अपने मतलब गांठने का अच्छा मौका हाथ लगा। वह दबे पैर याकूब के बंगले के अन्दर घुस गई और उसकी ओर देख, मुस्कुराकर बोली–,–"बंदगी साहब!"

याकूब उसे पहिचानता था, इसलिए उसे देखतेही वह उठ खड़ा हुआ और ज़रा अदब से झुक कर बोला,—

"अख्खा! आप हैं! आइए तशरीफ़ लाइए; बंदगी, बंदगी !!!"

ज़ोहरा,—"इस आधी रात के वक्त, बेमौके, मुझे देख कर आप ज़रूर ताज्जुब करते होंगे!"

याकूब,—"बेशक, ऐसा ही है; और मैं समझता हूं कि किसी ख़ास गरज़ से ही इस वक्त आपने यहां तक आनेकी तकलीफ़ उठाई होगी?"

ज़ोहरा,—"जी हां, बात ऐसीही है और निहायत ज़रूरी है; चुनांचे आप फ़ौरन कपड़े बदल कर मेरे साथ चलिए।"

याकूब,—"मगर कहां, और क्यों?"

ज़ोहरा,—"बिल्फ़ेल, मुख्तसर तौर पर मैं इस जगह फ़क़त इतना ही कहना मुनासिब समझती हूं कि आज आपकी क़िस्मत ने खूबही पलटा खाया; क्योंकि सुलताना बेगम साहिबा आपकी बहादुरी पर निहायत खुश हुई हैं और सिर्फ़ इनआम देदेनेही से उन्होंने अपनी क़दरदानी का ख़ातमा नहीं समझा है, चुनांचे वे कुछ और आपको बख़्शा चाहती हैं, इसी वास्ते वे आपकी मुन्तज़िर हैं और मुझे उन्होंने इसवास्ते भेजा है कि मैं आपको अभी अपने साथ ले चलूं और उनके रूबरू पेश करूं।"

ये बातें ज़ोहरा ने इस ढंग से कही थीं कि जिनमें किसी तरह का खुटका न था; मगर फिर भी याक़ूब मनही मन ज़रा चिहुंका और कहने लगा,—

"मगर, बी ज़ोहरा! जनाब सुलताना साहिबा ने गुलाम पर जो कुछ इनायतें कीं, वे ही क्या कम थीं, जो सर्कार ने ताबेदार

को इस वक्त तलब किया है ?"

ज़ोहरा,—"जब कि सुलताना की ऐसीही मर्ज़ी है कि आप फ़ौरन उनके रूबरू हाज़िर किए जांय, तो फिर इसमें आपको उज्र क्या है ?"

याकूब-"मेरी मजाल क्या है, जो मैं उज्र कर सकूं ! खैर चलिए; मगर यह तो बतलाइए कि इस वक्त सुलताना कहां तशरीफ़ रखती हैं ?"

ज़ोहरा,—"ख़ास, अपनी ख़ाबगाह में ।"

याकूब,—"ख़ास, अपनी ख़ाबगाह में ! ! ! वहां पर इस वक़्त और कौन कौन हैं ?"

ज़ोहरा,—"और कोई भी वहां पर नहीं है ।"

याकूब,-(ताज्जुब से) "और कोई भी वहां पर नहीं है ! ! ! सिर्फ़ बेगम साहिबा, तनहां अपनी ख़ाबगाह में तशरीफ़ रखती हैं और आधीरात के वक्त तुम, बी ज़ोहरी ! मुझे चुपचाप वहां ले जाया चाहती हो ?"

ज़ोहरा,-"आपको इन सब दलीलों से क्या मतलब ? जो सर्कारी हुक्म है, उसे जल्द तामील कीजिए और फ़ौरन दर्बारी कपड़े पहन कर मेरे साथ होइए ।"

याकूब,-"मगर नहीं, बी ज़ोहरा ! मैं आपके साथ इस वक्त कहीं नहीं जा सकता ।"

ज़ोहरा,—(झल्लाकर) "क्यों !"

याक़ूब,-"इसलिये कि यह आधीरात का,—सन्नाटे का—वक़्त है, रात अंधेरी है और आप एक खूबसूरत और नौजवान औरत हैं ।"

ज़ोहरा,—"तो क्या बेगम साहिबा के हुक्म की आप बेइज़्ज़ती किया चाहते हैं ?"

याक़ूब,—"लाहौल वलाक़ूवत ! अजी, बी ! बेगम के हुक्म की बेइज़्ज़ती तो तब समझी जाती, जब आप बेगम साहिबा का कोई हुक्मनामा मुझे देतीं और उस पर मैं अमल न करता ।"

ज़ोहरा,-"लीजिए. सुलताना का हुक्मनामा भी मैं अपने साथ लाई हूं । मैं यह बख़ूबी समझती थी कि आप अव्वल दर्ज़े के ज़िद्दी आदमी हैं, मेरी बातों पर आपको एतकाद न होगा ।"

यों कह कर ज़ोहरा ने अपने कुर्ते के ज़ेब में से एक काग़ज़ निकाल कर याकूब के हाथ में दे दिया, जिसे उसने शमादान के पास लेजा कर भली भांति पढ़ा। वह सचमुच रज़ीया बेगम का दस्तख़ती हुक्मनामा था और उस पर तारीख, बार और सन के अलावे रज़ीया की मुहर भी थी। उसमें याकूब को केवल यही हुक्म दिया गया था कि,–" इस वक्त ज़ोहरा तुमको जहां लेजाना चाहे, बिला उज़्र तुम उसके साथ जाओ। "

याकूब ने खूब ग़ौर के साथ उस हुक्मनामे को देखा और फिर दर्बारी कपड़े पहिन और उस हुक्मनामे को अपने ज़ेब में रख कर ज़ोहरा से कहा,—

" ले, चलिए; अब आप मुझे जहां ले जाना चाहें, मैं बिला उज़्र आपके हमराह चलने के वास्ते तैयार हूं। "

" आइए; " कह कर ज़ोहरा बंगले से बाहर हुई और याकूब भी बंगले का दर्वाज़ा बंद करके उसके साथ हुआ। फिर वे दोनों चुपचाप एक चोर-दर्वाजे की राह बाग़ के भीतरी हिस्से में पहुंचे और ज़ोहरा याकूब को इधर उधर घुमाती फिराती, एक गुंजान लतामंडप में पहुंची। वहां पहुंच कर उसने याकूब से कहा,—

" जनाब ! माफ़ कीजिएगा; यहांसे आपको अपनी आंखों पर पट्टी बांध कर मेरे साथ चलना होगा। "

याकूब,–" शाही हुक्मनामे में इसका कोई ज़िक्र नहीं है, इस लिये ऐसा मैं नहीं किया चाहता। "

ज़ोहरा,–" इस वक्त जो कुछ मैं कहूंगी, बिला उज़्र आपको उसकी तामीली करनी पड़ेगी "

याकूब,–" हर्गिज़ नहीं, इस भरोसे न रहिएगा ! मैं फ़क़त उस हुक्मनामे के बमूज़िब आपके साथ, जहां आप ले चलें, चलने के लिये तैयार हूं; इसके अलावे बग़ैर बेगम साहिबा के हुक्म के, आपके कहने से मैं कुछ भी नहीं करूंगा। "

ज़ोहरा,–" क्या आप यह नहीं जानते कि इस वक्त मेरा हुक्म, बेगम साहिबा का ही हुक्म है ? "

याकूब,–" जब तक इस बात का पर्वाना आप न दिखलावें, आपके हुक्म की इज्ज़त मैं उतनीही कर सकता हूं जितना कि आप मेरे हुक्म का लिहाज़ कर सकती हों ! "

ज़ोहरा,-" मआज़ अल्लाह ! यह शान ! यह ज़िद ! ख़ैर, तो आप आंखों पर पट्टी न बांधने देंगे ? "

याक़ूब,-" हर्गिज़ नहीं; क्योंकि मैंने अपनी आज़ादी फ़क़त बेगम साहिबा के हाथ बेची है, इसलिये मैं उतनाही करने के लिये मज़बूर हूं, जितना कि उन्होंने अपने हुक्मनामे में लिखा है। "

यह सुन कर ज़ोहरा चुप हो गई और एक हलकी आवाज़ याक़ूब के कानों में पहुंची, जिसे सुनतेही वह चौंक उठा और उसने चट अपने जेब में से मोमबत्ती निकालकर जलाई; क्योंकि उस समय तक वे दोनों अंधेरे—बल्कि घने अंधेरे-में बात चीत कर रहे थे।

बत्ती के जलतेही याक़ूब ने क्या देखा कि,—" एक लतामंडप के अन्दर खड़े हैं, एक संगमर्मर के चबूतरे के ऊपरवाला पत्थर उसके भीतर झूल गया है और उसके पास ज़ोहरा खड़ी है। ' उंजेला होतेही ज़ोहरा कुछ झल्लाई और कहने लगी,—

" आपने बत्ती किसके हुक्म से जलाई ? "

याक़ूब,-" न जलानेही का हुक्म किसने दिया था ? "

ज़ोहरा,-" ख़ैर, आइए, इसके अन्दर चलिए; यह एक सुरंग है, जिसमें उतरने के लिये सीढ़ियां बनी हुई हैं। "

यह सुन कर याक़ूब ने झांक कर उसके अन्दर देखा तो सच-मुच सीढ़ियां बनी हुई थीं। उन्हें देख, उसने ज़ोहरा से कहा,—

" पेश्तर आप उतरिए। "

ज़ोहरा,-" क्या आपको पहिले क़दम बढ़ाने में कोई उज़्र है ? "

याक़ूब,—" बेशक ! जब कि हुक्मनामे के बमूजिब आपही को आगे रहना होगा ! "

ज़ोहरा,—"ऐसा हुक्मनामे में कहां लिखा है ? "

याक़ूब,-"यह आपकी समझ का बोदापन है ! देखिए जब कि आप मुझे कहीं ले जा रही हैं तो हर हालत में आपही को आगे रहना होगा; बस उस लिखावट का यही मतलब है। "

याक़ूब की बातों से ज़ोहरा ने अच्छी तरह यह बात समझ ली कि गुलाम होने पर भी याक़ूब कोई मामूली आदमी नहीं है ! आख़िर, पहिले वही उस सुरंग में आगे उतरी और उसके पीछे पीछे हाथ में जलती बत्ती लिए हुए याक़ूब उतरा।

बीस बाईस डंडे सीढ़ी उतरने और दस बारह कदम आगे चलने पर सामने वाली पत्थर की दीवार में कोई खटका दबा कर ज़ोहरा ने फिर राह पैदा की और वे दोनों उस सुरंग में धंसे, जो चार हाथ चौड़ी, उतनीही ऊंची और दोसौ गज़ लंबी थी। उसकी बनावट बहुतही अच्छी और चिकने काले पत्थरों की थी, जिसमें दोनों बगल की दीवारों में तुर्की फ़ौज की मोर्चाबन्दी की तस्वीरें बहुतही सफ़ाई के साथ खोद कर बनाई गई थीं। यद्यपि याकूब एक सिपाही आदमी था, पर उस समय ज़ोहरा ऐसी तेज़ी के साथ कदम उठाती हुई आगे बढ़ी जाती थी कि उसे उन तस्वीरों को अच्छी तरह निरखने का समय न मिला; फिर भी जो कुछ उसने देखा, उतनेही से उसका जी फड़क उठा और उसने मनही मन उसके बनानेवाले कारीगर को धन्यवाद दिया।

निदान, दो सौ गज़ लांबी राह बात की बात में तय होगई और फिर सामने चिकने पत्थर की दीवार नज़र आई। ज़ोहरा ने वहां पर भी किसी हिक़मत से राह पैदा की और तब वे दोनों उसके अन्दर घुसे। कुछ ही दूर जाने पर ऊपर चढ़ने के लिये सीढ़ियां नज़र आईं और वे दोनों ऊपर चढ़ने लगे। उस समय भी आगे आगे ज़ोहरा ही थी।

पचास सीढ़ियां चढ़ कर वे दोनों एक छोटी और चौखूंटी कोठरी में पहुंचे। वहां पहुंच कर ज़ोहरा ने कहा,—

"हज़रत! अब बेगम साहिबा के रू ब रू आप दाख़िल हुआ ही चाहते हैं, इसलिये मेहरबानी करके अब तो बत्ती बुझा दीजिए।"

याकूब,—"तावक्ते कि बेगम साहिबा न दिखलाई दें, मैं बत्ती हर्गिज़ न बुझाऊंगा।"

आख़िर, ज़ोहरा ने सामने की दीवार में का कोई खटका दबाया, जिसके-दबातेही एक हलकी आवाज़ के साथ वहांका पत्थर ज़मीन के अन्दर समा गया और सामने एक आलीशान कमरे के अन्दर गावतकिए के सहारे मसनद पर ज़रा लेटी हुई सी रज़ीया दिखलाई पड़ी।

हिन्दुस्तान की सुलताना, रज़ीया बेगम की ख़ावगाह का बर्णन हम,—झोपड़े में रहने वाले—क्यों कर, करसकते हैं! किन्तु यह मसल मशहूर है कि,—"सोवें झोपड़े में और सपना देखें महलों का।'

इसके अनुसार यदि हम उस ख़ाबग़ाह के विषय में कुछ लिखें भी तो वह शायद उसका ठीक ठीक बर्णन कभी न होगा; हां! सपने का प्रलाप वह अवश्य समझा जायगा; अस्तु।

सुलताना की ख़ाबग़ाह एक चालीस हाथ लंबी चौड़ी बारहदरी थी, जो देखने से बिलकुल संगमर्मर से बनी हुई मालूम पड़ती थी। वह चिकनी चिकनी संगमर्मर की पटिया से पटी हुई थी और छत तथा दीवारों में जवाहिरात के बेल, बूटे, चरिन्द, परिन्द, और तरह तरह के नक्शे बने हुए थे, जिसकी लागत का अन्दाज़ा करना मानो अपनी अक़्ल से हाथ धोना था। बिल्लौरी झाड़ और हांड़ियां छत की सुनहली कड़ियों में सोने की जंज़ीर के सहारे लटक रही थीं और दीवारों में सोने की जड़ाऊ शाखों में बिल्लौरी फानूस चढ़े हुए थे। जड़ाऊ ब्राकेट में जड़ाऊ गुलदस्ते सजे हुए थे। दीवारों में चारो ओर सुनहले जड़ाऊ चौखटे में जड़ी हुई बहुत बड़ी और ख़ूबसूरत तस्वीरें लटकाई हुई थीं। कमरे में उतनाही लंबा चौड़ा मिस्र का बना हुआ बेशक़ीमत और दलदार रेशमी गद्दा बिछा हुआ था, जिसमें शिकारगाह बड़ी ही ख़ूबी के साथ बनाई गई थी। उस गद्दे पर पैर रखने से एक एक बालिश्त पैर उसमें धंस जाता और फिर जहांसे पैर उठाया जाता, फिर वह (गद्दा) ज्यों का त्यों (बराबर) होजाता था। कमरे में जा बजा जड़ाऊ तिपाइयां रक्खी हुई थीं, जिन पर पन्ने की तश्तरी, प्याले, लाजवर्दी सुराही और याक़ूती ग्लास तथा खिलौने सजे हुए थे। संदली इलामारियों में बेशक़ीमत जवाहिरात, गहने, जड़ाऊ खिलौने, बढ़ियां बढ़ियां पोशाक, सिंगार करने की चीज़ें, शराब की बोतलें, तस्वीरों के आलबम, किताबें और तरह तरह की चीज़ें सजी हुई थीं। एक ओर जवाहिरात के हाशिए और मोतियों की झालर की मसनद बिछी हुई थी, एक ओर पन्ने के पाए का निहायत उमदः छपरखट बिछा हुआ था, जिसकी रेशमी मसहरी ज़र्दोज़ी काम की थी और जिसमें जाबजा जवाहिरात लगे हुए थे और बड़े बड़े मोतियों की दोहरी झालरें लटक रही थीं। एक ओर कद आदम कई आईने लगे हुए थे और एक ओर गोल मेज़ के चारो ओर कई जड़ाऊ कुर्सियां धरी हुई थीं और उस पर चौसर, शतरंज और ताश रक्खे हुए थे। एक ओर कई किस्म के बाजे सजे हुए थे और एक ओर

तरह तरह के बेशकीमत हथियारों की बहार थी।

कहने का मतलब यह कि संसार की सभी आवश्यक, सुंदर, बहुमूल्य और बेजोड़ चीज़ें उस (सुलताना) की ख़ाबगाह में सजी हुई थीं।

बेगम पर नज़र पड़ते ही ज़ोहरा ने आगे बढ़कर और अदब से झुककर सलाम किया और कहा,—

"हुज़ूर! मैं अपना काम पूरा कर आई।"

रज़ीया,-(वैसेही अधलेटी सी) "याकूब आया?"

ज़ोहरा,—"जीहां, जहांपनाह! हाज़िर है।"

रज़ीया,—"तो उसे यहीं बुलाले।"

"जो हुक्म;" कहकर ज़ोहरा ने याकूब की ओर देखकर इशारा किया और याकूब ने उस स्वर्ग को लज्जा देने वाले कमरे में पैर रक्खा और दोही चार कदम आगे बढ़कर उसने ज़मीन तक झुक कर सलाम किया।

ज़ोहरा वहांसे टल गई और रज़ीया ने याकूब की ओर प्यासे नैनों से भरपूर घूरकर कहा,—

"मियां याकूब ख़ां! आओ भई! और नज़दीक आओ! वल्लाह! तुम किस उलझन में मुबतिला हो! खुदा के वास्ते अपने दिल की धड़कन दूर करो और आओ, नज़दीक आओ और बेतकल्लुफ़ी के साथ मेरे सवालों का जवाब दो।"



तेरहवां परिच्छेद.

इश्क नहीं, हुकूमत।

" जो तुमने की नहीं, तो फिर नहीं मैं तुमको छोड़ूंगा।
तुम्हारी जान लूंगा, और अपनी जान देदूंगा।"
(सौदा)

पाठकों को समझना चाहिए कि जब ज़ोहरा ने सुरंग का पत्थर हटा कर उस कमरे में आने के लिये राह पैदा की थी, उस समय याकूब ने बेगम पर नज़र पड़ते ही चट अपने हाथ की बत्ती बुझाकर उसे अपने ज़ेब में रक्खा था और सरसरी नज़र से एक बार बेगम और उसकी ख़ाबगाह के कुछ हिस्से को, जो उस समय उसकी आंखों के सामने थे, देख लिया था। फिर जब वह कमरे में आया तो उसने नीची आंखें किए हुए ही बेगम को सलाम किया; किन्तु जब उसने बेगम की वे बातें सुनीं, जो ऊपर लिखी जा चुकी हैं, तो वह कुछ चिहुंका, पर अपना जी ठिकाने कर वह जहां का तहां खड़ा रह गया। उसकी यह हालत देख कर बेगम ने फिर कहा,—

" अय, वाह ! मियां, याकूब ! मैं क्या कह गई, इसे तुमने सुना या नहीं ! खुदा के वास्ते इतना हिजाब न करो और आओ, नज़दीक आओ। खुदा जानता है कि आज मैं तुमको पाकर किस कदर खुश हुई हूँ, इसे बयान नहीं कर सकती।"

बेगम की बातों से बहादुर याकूब बहुत चिहुंका और उसने वहीं पर खड़े खड़े, जहां पर कि वह जिस तरह से खड़ा था, कहा,—

" अय, सुलताना ! इस गुलाम को आपने आधी रात के वक्त इस तनहाई के आलम में, अपनी ख़ाबगाह में किस ग़रज़ से तलब किया है ?"

रज़ीया,—" उसका हाल, मियां याकूब ! तुमको अभी मालूम होगा; इसलिये आओ, मेरे नज़दीक आकर बैठो।"

याकूब,-" सुलताना! आपका हुक्म यह गुलाम बसरोचश्म बजा ला सकता है। मगर इस फ़िद्वी का तनहाई के आलम में अपनी मलका को ख़ाबगाह में उसके बराबर बैठना सरासर बेजा है; इसवास्ते आप जो हुक्म दें, गुलाम उसे बजा लाए और यहाँसे फ़ौरन चला जाय!"

यह सुन कर रज़ीया उठ खड़ी हुई और उसने हंसते हुए, आगे बढ़कर याकूब का हाथ थाम लिया और उसे लाकर अपने मसनद के बराबर बैठाया और उसीके सामने खुद भी बैठ कर यों कहा,—

" प्यारे! याकूब! तुम भी, भई! अजीब बसर हो! वल्लाह! आज से तुम मुझे अपनी बहन समझो और मैं भी तुम्हारे साथ उसी तरह पेश आऊंगी, जिस तरह कि बहन अपने भाई के साथ बरताव रखती है। मगर ऐसा क्यों? यह तुम पूछ सकते हो! ख़ैर तो सुनो-उस रोज़ दंगल में तुमने, मियां याकूब! जैसी लासानी बहादुरी और सिपहगरी दिखलाई थी, उसका एवज़ सिवाय इसके और मैं तुम्हें क्या दे सकती हूँ कि मैं इसी लहज़ो तुमको गुलामी से रिहा करूं और एक बड़ी ज़ागीर तुम्हें बतौर इनआम देकर तुमको अपने दरबारी उमराओंमें शुमार करके अपना फ़र्ज़ अदा करूं।"

यह एक ऐसी बात थी और इसके कहनेका एक ऐसा अनोखा ढंग था कि जिसे सुन कर याकूब का दिल फड़क उठा और उसने मानों स्वर्ग की संपत हाथों हाथ पाई। क्योंकि जिस आशा का सपना उसने कभी देखा ही न था और न जिस आशा के सफल होने की उसने कभी मन ही मन कल्पना ही की थी, उसे अनायास यों सफल होते देख वह मारे ख़ुशी के क्यों न फड़क उठता!!! हम तो इस बात पर ज़ोर देकर कह सकते हैं कि याकूब जैसी हालत में जो कोई मुबतिला हों, वे भी उस समय मारे ख़ुशी के अवश्य उछल उछल पड़ेंगे, जब कि उन्हें भी याकूब ही की भांति कोई आशातीत वस्तु के मिलने की संभावना होगी।

निदान, बेगम की उन बातों को, जो निहायत ही हमदर्दी के साथ कही गई थीं, सुन कर याकूब खड़ा होगया और तीनबार ज़मीन चूम कर उसने सलाम किया और कहा,—

"अय, दीन दुनियां की मालिक ! सुलताना ! अल्लाहताला हुज़ूर की उम्र दराज़ करे, मर्तबा बढ़ावे और दिली मुरादें बर आएं। आज हुज़ूर ने इस गुलाम पर बाकई, वह फ़ैयाज़ी की है कि जिसके शुक्रिया अदा करने की ताकत ज़बान में नहीं है।"

रज़ीया ने कहा,—"सुनो, मियां याक़ूब ! बैठ जाओ, खड़े क्यों हो ? अभी मुझे तुम से बहुत कुछ बातें करनी हैं। हां तो सुनो! मैंने कुछ ऐसा काम नहीं किया है कि जिसके लिये तुम मेरी इतनी तारीफ़ करो। मैंने तो फ़क़त अपना फ़र्ज़ अदा किया है और तुम्हारी लामिसाल बहादुरी और सिपहगरी की जैसी चाहिए, क़द्र की है। वल्लाह ! तुम फिर भी खड़े ही हो !"

यों कहकर बेगम ने उठकर और याक़ूब का हाथ पकड़ कर उसे बैठाया और फिर यों कहा,—

"सुनो भई, याक़ूब ! जब कि हममें और तुममें अब बहन भाई का रिश्ता करार पा चुका तो फिर तुम्हें लाज़िम है कि अब तुम भी मेरे साथ वैसी ही बेतक़ल्लुफ़ी के साथ पेश आओ, जैसी कि मैं तुम्हारे साथ कर रही हूं।"

याक़ूब,—"हुज़ूर ! आपकी मेहरबानी का इन्तेहा नहीं, मगर गुलाम कुछ अर्ज़ किया चाहता है, अगर इजाज़त हो ?"

रज़ीया,—"वल्लाह ! अब 'लफ्ज़ इजाज़त' की क्या ज़रूरत है ? जो तुम्हारे जी में आवे, बेखटके कहो।"

याक़ूब,—(सिर झुकाए हुए) "अय, सुलताना ! आपने जो मिहरबानी मुझ पर की, मैं हर्गिज़ इतनी इनायत के क़ाबिल न था; मगर बात यह है कि इतना करने पर भी आप मेरे रुतबे या दर्जे को अब उससे ज़ियादह हर्गिज़ नहीं बढ़ा सकतीं, जो कि आपके आला दर्जे के अमीरों को हासिल है; इसलिये मेरे और आपके बरताव का भी कोई हद ज़रूर काइम होना चाहिए और उसके आगे आपको या मुझे हर्गिज़ क़दम बढ़ाने का इरादा न करना चाहिए।"

रज़ीया,—"लाहौलवलाक़ूवत ! यह तुम क्या वाही बकने लगे ! अजी मियां ! मैं सुलताना हूँ, इसलिये मुझे इस बात का अख़्तियार हासिल है कि मैं जब, जिसे चाहूं, उसे आले से आले दर्जे तक पहुंचा सकती हूँ।"

याक़ूब,-"बेशक आपको इसका पूरा अख़्तियार है; मगर फिर भी आप मुझ जैसे किसी गुलाम को अपने हक़ीक़ी बिरादर के रुतबे या दर्जे तक नहीं पहुंचा सकतीं।"

रज़ीया,-(क़हक़हा लगा कर) "मआज़ अल्लाह मिनहा ! यह तुम क्या बकने लगे ! अजी ! मुझे तो यहां तक अख़्तियार हासिल है कि जिसे चाहूं, देहली के तख़्त पर बैठा दूं; और अगर खुदा ने चाहा तो एक दिन ऐसा भी आवैगा कि जब तुम मेरी इस ताक़त का अंदाज़ा बख़ूबी कर सकोगे।"

यह एक ऐसी बात थी, जिसने याक़ूब जैसे बहादुर शख़्स के कलेजे को भी हिला दिया और उसने हाथ जोड़ कर कहा,-

"बेगम साहिबा ! मुआफ़ कीजिएगा; बंदे की राय हुज़ूर की राय के साथ इत्तिफ़ाक़ नहीं कर सकती क्योंकि ये सब आसार अच्छे नहीं हैं; इनसे सल्तनत को बड़ा भारी नुक़सान पहुंचता है और रियाया या दर्बार के अमीर उमरा का दिल अपने बादशाह से बिल्कुल फिर जाता है।"

रज़ीया,-"अजी, हज़रत ! तुम्हारा किधर ख़याल है ?"

याक़ूब,-"अफ़सोस का मुकाम है कि आपने, इतनी बड़ी आलिम और आक़िल हो कर भी मेरी बातों पर मुतलक़ ग़ौर न किया।"

रज़ीया,-"तुम्हारी बेसिर पैर की बातों पर मुझे ग़ौर करने या सिर खपाने की कोई ज़रूरत नहीं है। बस, तुमको फ़क़त इतना ही हुक्म दिया जाता है कि तुमको दर्बार से 'अमीर-उल्-उमरा' के ख़िताब और खिल्लत के साथ 'दस हज़ारी मनसबदारी' का पर्वाना दिया जायगा और ज़ागीर में दो लाख रुपए साल का लाख़िराज़ इलाका बख़शा जायगा। बस, फिर तुम्हारा यही काम होगा कि तुम 'दारोग़ा अस्तबल' के काम से रिहाई पाकर 'मुबारक-महल' नामी आलीशान इमारत में, जो कि शाही बाग़ के उस सिरे पर बनी हुई है, बड़ी शान शौकत के साथ रहा करोगे और बराबर दर्बार में हाज़िर रह कर, जब मैं घोड़े पर सवार होकर हवाखोरी के लिये महल से निकलूंगी तो तुम मुझे मेरे घोड़े पर हाथ का सहारा देकर सवार करा दिया करोगे और अपने घोड़े पर सवार होकर बराबर मेरे साथ रहोगे।"

याक़ूब,–(खुश होकर) "खुदारा, अगर इतनाही काम मेरे सुपुर्द होता है तो इसे मैं बख़ूबी कर सकूंगा।"

रज़ीया,–"वल्लाह! घबराओ नहीं, ज़रा ठहरो। उस काम को तो, जिसका बयान मैं अभी कर गई, तुम औरों के ज़ाहिर में करोगे, मगर कुछ काम तुमको इस तौर पर भी करने पड़ेंगे जिनकी ख़बर कोई कानों कान भी न जान सकेगा। वह यह कि, जब जब मेरा दिल घबराएगा, ज़ोहरा चुपचाप तुमको यहां लेआएगी और दो चार घड़ी तुम्हारे साथ दिल्लगी मज़ाक या चौसर शतरंग में सर्फ़ कीजायगी। कहने का मतलब यह कि बज़ाहिर तो तुम फ़क़त दरबारी अमीरों की हैसियत से रहोगे और बातिन में हमारा तुम्हारा बर्ताव दोस्तानः रहेगा, और सिवाय ज़ोहरा के और किसी चौथे शख़्स के कानों तक तह बात न जाने पाएगी।"

ये बातें ऐसी थीं कि जिन्होंने याक़ूब के रहे सहे होश हवास एक दम से खो दिए, पर वह बेचारा कर ही क्या सकता था और उसकी बातों पर बेगम ध्यान ही कब देती थी! लाचार, वह बेमौका समझ कर चुप होगया और बेगम ने फिर कहा,–

"दोस्त, याक़ूब! मैं समझती थी कि मेरी इन बातों से तुम इस क़दर खुश होगे कि मेरा हाथ चूम लोगे, मगर अफ़सोस, प्यारे! तूने अपनी ज़बान से इतना भी न कहा कि;–'बेगम! मैं तेराही हूं!!!' क्यों?"

याक़ूब ने सिर खुजलाते हुए कहा,–"हज़रत! मुझे आपके हुक्म से कब इनकार हो सकता है! मगर बेहतर तो यह होता कि आप मुझे आज़ादी के साथ ही साथ यह हुक्म देतीं कि,–'याक़ूब! तू अब खुशी खुशी अपने वतन जा।'"

रज़ीया,–"नहीं, दोस्त! प्यारे याक़ूब! अब मैं ताज़ीस्त, तुझे हर्गिज़ अपने पास से दूर न करूंगी; और क्यों दोस्तमन! क्या तू अपनी प्यारी बहन को भी इसी बेमुरौवती के साथ छोड़ जाता, जिस तरह कि तू मुझे छोड़ना चाहता है?"

किन्तु, पाठक! बेचारा याक़ूब इस सवाल का क्या जवाब देता! और उसमें जवाब देने की ताक़त ही कितनी थी! इस लिये वह चुप होगया और सिर खुजलाते खुजलाते बोला,—

" हुज़ूर ! मेरा अज़ीज़ अयूब भी आज़ाद कर दिया जाता तो बेहतर होता।"

रज़ीया,-" मियां याकूब ! इसके कहने की कोई ज़रूरत न थी; क्योंकि मैंने दिलही दिल में यह पक्का इरादा कर लिया था कि तुम्हारे साथ ही अयूब भी आज़ाद कर दिया जाय और वह भी कोई वहदा और ज़ागीर पाए।"

याकूब,—" जी हां, हुज़ूर ! और उसका दिल किताबों की सैर करने में बहुत लगता है, इसलिये अगर हुज़ूर उसे सरकारी कुतुबखाने से पढ़ने के लिये किताबें लेने का हुक्म देदें तो और मिहरबानी होगी।"

रज़ीया,—" वल्लाह, यह तो कोई बात ही नहीं है, इसका बंदोबस्त तो मैं बहुत जल्द कर दूंगी।"

निदान, इसी ढब की बातों में रात बीत गई, आस्मान ने कुद्-रती सफ़ेद चादर अपने बदन पर डाल ली और उसकी उस हर्कत पर चंचल चिड़ियाएं शोर गुल मचाने लग गईं। यह देख रज़ीया ने अपने कलेजे पर पत्थर रख कर याकूब की जान छोड़ी और उसने भी बेगम के हाथ से छुटकारा पाने को ग़नीमत समझा।

रज़ीया ने सीटी बजाई; जिसकी आवाज़ सुनते ही ज़ोहरा, जो सुरंग के मुहाने पर चुपचाप खड़ी थी, सामने आई और बेगम ने याकूब की ओर इशारा करके उससे कहा,—" इनको सुरंग के बाहर पहुंचादे।"

" जो हुक्म हुज़ूर; " कह कर ज़ोहरा सुरंगवाली कोठरी में चली गई और याकूब ने उठकर बेगम को सलाम किया। बेगम ने बड़े तपाक के साथ उठ कर उसका हाथ थाम लिया और कहा,—

" दोस्तमन ! आज की शब योंहीं गुज़र गई, मगर मेरी बात न पूरी हुई। ख़ैर कुछ पर्वा नहीं; खुदा ने चाहा तो फिर किसी रोज़ तुमको यहां बुलाकर अपना दिल शाद करूंगी।"

केवल, "बेहतर"-कहकर याकूब ने उस समय अपना पीछा छुड़ाया और बेगम से रुख़सत हो, वह ज़ोहरा के साथ सुरंग में होता हुआ उसी तरह उससे बाहर हुआ, जिस तरह कि वह महल तक गया था। रास्ते में ज़ोहरा ने उससे तरह तरह की छेड़छाड़

की और इस बात पर उसने बहुत ज़ोर दिया कि,-'यह राज़ किसी पर खुलने न पाए;' मगर याकूब ने उसकी किसी बात का भी जवाब न दिया और वह सुरंग से बाहर होते ही अपने डेरे पर पहुंचा।

अपने मकान का ताला खोल कर जब याकूब अन्दर गया तो उसने अपनी खाट पर एक बंद लिफ़ाफ़ा पाया, जिसे उसने तुरंत उठा लिया और उसके अन्दर से एक ख़त निकाल कर पढ़ा, जिसमें यह लिखा हुआ था,—

"शाबाश, याकूब! शाबाश! तूने खूब किया, जो बेगम के चकाबू में अपने तईं न फंसाया। अज़ीज़! तेरी उस दिलेरी, दियानतदारी और लियाक़त ने मुझे तेरे पाकीज़ःख़यालात का खूब ही जौहर दिखलाया, जिससे मेरे दिल में तूने अच्छी जगह पाई, जिसका नतीजा तेरे लिये अच्छा ही होगा।"

इस पत्र को पढ़ कर याकूब हैरान हो गया कि;-"यह माजरा क्या है? ताला बंद का बंद है, और घर के अन्दर ख़त आ मौजूद हुआ!!! अभी बेगम की दिली आर्ज़ू उसके दिलही में है और इस की खबर किसी ग़ैर के कानों तलक पहुंच गई!!!"



चौदहवां परिच्छेद

दोनों आशिक़ !!!

"छूट जाऊं ग़म के हाथों से जो निकले दम कहीं।
ख़ाक ऐसी ज़िन्दगी पर, तुम कहीं औ हम कहीं॥"
(नज़ीर)

समय आधीरात का है, चारों ओर अंधेरे के साथ ही साथ गहरा सन्नाटा भी छाया हुआ है, कभी कभी पहरे वालों के संग संग कुत्तों के भूकने की भयावनी आवाज़ सुनाई देती है और सारा संसार प्रकृति देवी के शान्तिमय क्रोड़ में सोया हुआ है। ऐसे समय में एक निराले कमरे में, जिसके सब दर्वाज़े भीतर से बंद हैं और शमादान में मोमबत्ती जल रही है, सौसन और याकूब, दोनों एक दूसरे के कंधे पर अपने अपने सिर को रक्खे हुए हिचकियां बांध कर रो रहे हैं और रह रह कर एक दूसरे की तराबोर आंखों को पोंछ रहा है। एक घंटे तक उन दोनों की यही दशा रही, फिर सौसन ने सिसकते सिसकते कहा,—

"दिलबर! मेरी बात मानो, बेगम को नाराज़ न करो और जो वह कहती है उसे बिला उज़्र क़बूल कर लो। प्यारे! मैं हर हालत में तुम्हारी ही हूं। अगर दिन रात में एक लहज़ः भी मेरी आंखे तुम्हें देख लेंगी, तो ये इतने ही में आसूदः हो जायंगी और जानेमन! खुदा जानता है कि मैं तुम्हें खुश व खुर्रम देख कर निहायत ही खुश हूंगी। गो, मैं फिर तुम्हें अपने सीने से न लगा सकूंगी, मगर इससे क्या! मेरे दिल के अन्दर तो तुम्हारी ही तस्वीर खिची हुई है; बस उसीका ध्यान करके मैं अपनी ज़िन्दगी खुशी के साथ बिता दूंगी; इसलिये, प्यारे,! तुम्हें मेरे सर की क़सम, तुम मेरा कहना मानो और बेगम जो कहे, उसे क़बूल कर लो।"

याकूब,—"प्यारी, सौसन! आज ये कैसी बातें मैं तुम्हारे मुंह से सुन रहा हूं! अफ़सोस! तुमने मेरे इश्क़ को मुतलक़ न

समझा !!! प्यारी ! क्या तुमने मुझे इतना कमीना समझ लिया है कि मैं तुम जैसी माशूका को छोड़कर दौलत या बादशाहत के लालच में पड़कर उस फ़ाहिशा के हाथ अपने दिल को बेचूंगा !!! हर्गिज़ नहीं, हर्गिज नहीं ! ! ! दिलरुबा ! चाहे याक़ूब के तन को बेगम धज्जियां उड़ा डालें, मगर प्यारी ! जब तक इसके कालिब में जान बाक़ी रहेगी, यह सिवा तुम्हारे और किसी ग़ैर का हर्गिज़ न होगा।"

सौसन,—"प्यारे ! अफ़सोस, तुमने मेरा दिली मकसद ज़रा न समझा ! अजी दोस्त ! यह न समझो कि जब तुम बेगम से आशनाई कर लोगे तो सौसन किसी ग़ैर शख़्स के साथ अपना मुंह काला करेगी ! मगर नहीं, यह हमीशा फ़क़त तुम्हारी ही रहेगी और आख़िरी दम तक इसके दिल में सिवा तुम्हारे और किसी ग़ैर शख़्स को जगह नसीब न होगी।"

याक़ूब,—"मगर, प्यारी ! ये बातें तुम्हारे मुंह से आज क्योंकर निकल रही हैं ! अय, दिलरुबा ! क्या याक़ूब को तूने इतना कमीना समझ लिया है कि यह तुझे छोड़ कर किसी ग़ैर औरत के साथ मज़े उड़ाएगा और तेरे दिल को यों जला जला कर कबाब बनाएगा !!! नहीं, प्यारी ! यह मुझसे हर्गिज़ न होगा, इसमें चाहे जो हो।"

सौसन,—"प्यारे ! तुम्हारा किधर ख़याल है ! अजी ! मैं तो फ़क़त तुम्हें देख कर बड़े आराम के साथ अपनी ज़िन्दगी के दिन काट दूंगी और कभी ख़्वाब में भी रंजीदा न हूंगी। मुझे दुनियांदारी की ज़रा हवस नहीं है। मैं तो यह चाहती हूं कि तुम बेगम के साथ निक़ाह कर लो और यही समझो कि गोया सौसन के साथ ही शादी हुई है।"

याक़ूब,—"जी हां ! आप मुझे निरा दूधपीता बच्चाही समझती हैं क्या ? अजी, हज़रत ! यह मुझसे जीतेजी हर्गिज़ न होगा।"

सौसन,—"तो आज से आप मेरा मुंह न देखेंगे।"

याक़ूब,—"यह क्यों ?"

सौसन,—"इसलिये कि आप मेरा कहना नहीं मानते।"

याक़ूब,—"सौसन ! चाहे तुम्हारी जुदाई की आग में मुझे ताक़यामत जलना पड़े, चाहे तुम मुझे आज पीछे अपना रुख़सार

न दिखलाओ, मगर यह यकीन करो कि अब सिवा सौसन के याकूब के दिल में किसी ग़ैर नाज़नी को हर्गिज़ जगह न मिलेगी और यह तुम्हारा आशिक़ फ़क़त तुम्हारीही याद में अपनी उम्र खो देगा।"

सौसन,—"प्यारे! अगर मैं मरजाऊं, तो भी क्या तुम बेगम की आर्ज़ू पूरी न करोगे?"

याकूब,—"सौसन! खुदा के वास्ते यह कलमा ज़बान से बाहर न निकालो। और अगर यह यकीन न हो तो जब चाहो, इस बात की आजमाइश कर लो कि जिस घड़ी मेरे कानों ने यह सुना कि,—'सौसन ने बिहिश्त की ओर कूच किया;' उसी घड़ी याकूब अपनी जान देडालेगा।"

सौसन,—"तो क्यों प्यारे! तुम बेगम की आर्ज़ू किसी तरह पूरी न करोगे?"

याकब,—"कभी नहीं, क्यों कि यह काम मुझसे हर्गिज़ न होगा, चाहे इस में मेरी जान जाय या रहे।"

सौसन,—"मगर सुनो तो प्यारे! ऐसा भी तो हो सकता है कि पहले तुम बेगम के साथ निक़ाह करलो, फिर मुझे भी अपनी बीबी बना लेना।"

याकूब,—"प्यारी, सौसन! तुम्हारा किधर ख़याल है? भला मैं अपने उस दिल को, जो अब दरहक़ीक़त तुम्हारा ज़रख़रीद गुलाम हो चुका, अब दूसरे को क्योंकर दे सकता हूं? तिस पर तुर्रा यह कि बेगम साहिबा निकाह या शादी नहीं किया चाहतीं, बल्कि ज़िना या गुनाह करने की ही उनकी मनशा है। ऐसी हालत में, प्यारी सौसन! बंदा भला कब उनकी बातों में आ सकता है? और इस बात का तुम ज़रा भी गुमान न करो कि बेगम से आशनाई कर लेने पर भी मैं तुम्हें अपनी बीबी बना सकूंगा; क्योंकि वह कंबख़्त अजब नहीं कि तुम्हें मार डाले और जब मुझसे उसका दिल भर जाय तो किसी दूसरे शख़्स की तलाश करे और मुझे भी दुनियां से राही करदे।"

ये बातें ऐसी थीं कि जिन्होंने सौसन के कलेजे को दहला दिया और उसने थर्रा कर लड़खड़ाती हुई आवाज़ से कहा,—

"तो प्यारे! क्या होगा?"

याकूब,—"खुदा को याद करो, वही पर्वरदिगार हम लोगों का मददगार है; सिवा उसके और कोई दूसरा गरीबपर्वर नहीं है। और प्यारी, सौसन! इस वक़्त मैं तुमसे इसी बारे में कुछ बहस किया चाहता हूं, ज़रा खूब सोच समझ कर जवाब देना।"

सौसन,—"इसी बेगम के साथ निकाह के बारे में?"

याकूब,—"हां, इसीके बारे में।"

सौसन,—"क्या बात है?"

याकूब,—"बात बहुतही नाजुक और ख़तरनाक है और अजब नहीं कि बेगम की यह ऐय्याश तबीयत ही उसकी बर्बादी का बायस होगी और उसे बहुत जल्द तबाह कर डालेगी।"

याकूब की इन बातों ने सौसन को दहला दिया और उसने घबरा कर पूछा,—"यह क्यों कर?"

याकूब,—"क्या तुमने उस यूनानी तवारीख़ की किताब को जी लगा कर पढ़ा है?"

सौसन,—"वही जो तुमसे ली थी?"

याकूब,—"हां वही! उस पर तुमने कुछ ग़ौर किया है?"

सौसन,—"ओहो! प्यारे! यह तो तुमने बड़ी बारीकी निकाली! अब मैं बेगम के साथ किसी किस्म के लगाव रखने की सलाह तुम्हें नहीं दे सकती, बलिक अब तो यों कहती हूं कि जहां तक मुमकिन हो, तुम उससे अपने तईं दूर रक्खो और अगर होसके तो यहांसे निकल भागने की कोशिश करो। मैं हर हालत में तुम्हारा साथ दूंगी।"

सौसन की ये बातें सुन कर याकूब बहुतही प्रसन्न हुआ और उसने कहा,—"शुक्र है, खुदा का कि तुमने दरहक़ीक़त उस किताब को दिल लगा कर पढ़ा और बहुत जल्द ठीक राह पर तुम आगई। भला, प्यारी! ज़रा बतलाओ तो सही कि अभी थोड़ी ही देर पहिले तुम इस बात पर ज़ोर दे रही थीं कि,—"मैं बेगम के ख़ातिरख़ाह उससे आशनाई करलूं;" मगर अब यकबयक तुम्हारी राय एक दम से पलट क्यों गई?"

सौसन,—"प्यारे! बेगम के साथ ताल्लुक़ कर लेने के लिये जो मैं ज़िद कर रही थी, उस वक्त मुझे उस किताब का मुतलक ख़याल न था। मगर तुम्हारे इशारा करतेही मेरा ध्यान उस पर गया और

अब मैं यही बिहतर समझती हूं कि तुम्हारा बेगम के साथ किसी किस्म के लगाव का रखना बिहतर नहीं। इसको वजह यह है कि उस किताब की रू से बादशाह या सुल्ताना के जो वसूल होने चाहिएं, रज़ीया उससे बिलकुल बख़िलाफ़ हो रही है और अपनी बर्बादी आप किया चाहती है। जो हालत आज कल रज़ीया की हो रही है, वही हालत यूनान के बादशाह दारा की लड़की की हुई थी। उसने जवानी के आलम में आगे पीछे का ख़याल छोड़ कर अपने एक हबशी गुलाम के साथ आशनाई कर ली थी और छिपा लुका कर उसे अपने महल में बुलाती थी। आख़िर, यह राज़ छिप न सका और ज़ाहिर हो गया और गुलाम के साथ वह सुल्ताना, जिसका नाम शायद लैला था, मारी गई और सल्तनत एक ग़ैर शख़्स के हाथ में चली गई।"

याकूब,—"बेशक, प्यारी! तुमने उस किताब को दिल लगा कर पढ़ा है। हां, उस बेगम का नाम लैला ही था। यही नतीजा रज़ीया का भी होने वाला है। क्योंकि यह इस वक्त जवानी के नशे में चूर हो रही है और उसे अपने नफ़े नुक़सान का मुतलक ख़याल नहीं है। नतीजा इसका यह होगा कि यह किसी न किसी के साथ आशनाई ज़रूर करेगी और बात ज़ाहिर होने पर अपने आशना के साथ दर्बारियों के हाथ से मारी जायगी। अजब नहीं कि यह कार्रवाई उसके किसी भाई की ओर से की जाय और उसे मार कर उसका कोई भाई ही देहली के तख़्त पर अपना कब्ज़ा करे। क्योंकि भाइयों के कैद कर लेने से इसकी ज़ालिम मां भी इससे खुश नहीं है।"

याकूब की बातों को सौसन ने खूब ध्यान से सुना और उसके चुप होने पर यों कहा,—

"बेशक, प्यारे! तुम्हारा सोचना बहुत सही है। और अब मैं यही बिहतर समझती हूं कि रज़ीया को अपनी दिली ख़ाहिश अपने दर्बार के बड़े बड़े अमीर उमराओं पर ज़ाहिर करनी चाहिए और उन्हींकी राय के मुताबिक उसे काम करना चाहिए; जैसा कि सुलताना हमीदा ने किया था।"

याकूब,—"प्यारी! सौसन! मैं निहायत खुश हुआ कि तुमने उस यूनानी तवारीख़ को बड़े ग़ौर के साथ पढ़ा है। अब मैं

समझता हूं कि तुम जो बेगम के साथ आशनाई करने के वास्ते मेरे साथ ज़िद करती थीं, यह फ़क़त मेरे दिल के टटोलने की नीयत से ! ! !

सौसन,–"नहीं, जानेमनसलामत ! उस वक़्त मुझे उस तवारीख़ का मुतलक़ ख़याल न था । "

याक़ूब–" ख़ैर, तो अब हमीदा का क़िस्सा भी बयान करो, जिससे मैं यह समझूं कि तुमने उस किताब में कहां तक दिल लगाया है ? "

सौसन,—"सुनो, प्यारे ! लैला के मारे जाने के दोसौ बरस बाद, बादशाह शमसुद्दीन जब मरा तो उसकी नौजवान लड़की यूनान के तख़्त पर बैठी । वह बड़ी आक़िल और आलिम थी । आख़िर, जब जवानी के जोश ने उसे बेक़ाबू करना चाहा तो उसने अपने दिल और अपनी तबीयत का खुलासा हाल अपने वज़ीरों और अमीरों पर ज़ाहिर कर दिया और उनसे इस बारे में सलाह और मदद चाही । आख़िर, लोगों ने ख़ूब ग़ौर करने के बाद उसकी शादी एक ख़ान्दानी अमीर के साथ करदी, मगर उस अमीर से इस बात का एक इकरारनामा लिखवा लिया गया था कि,–'वह सिर्फ़ रात के वक़्त ६ घंटे बेगम के पास रहने के अलावे और किसी किस्म का ताल्लुक बेगम या सल्तनत से न रक्खेगा और अगर किसी किस्म की साज़िश उसकी पाई जायगी तो वह फ़ौरन जान से मार डाला जायगा ।' आख़िर, उस अमीर ने बड़ी नेकनीयती से बेगम के साथ अपना दिन बिताया और जब बेगम को लड़का हुआ और वह बड़ा हुआ तो वही यूनान का नामी बादशाह सिकन्दर हुआ । "

याक़ूब,–"शाबाश ! शाबाश ! ! ! प्यारी, सौसन ! बेशक तुमने उस किताब को ख़ूब ग़ौर के साथ पढ़ा है । अच्छा, अब एक बात पर और ग़ौर करना चाहिए । वह यह है कि जिस तरह बेगम मेरे पीछे पड़ी है, उसी तरह उसकी कुटनी लौंडी ज़ोहरा बेचारे अयूब पर घात लगा रही है । "

सौसन,–"हां प्यारे ! वह हाल तुमने मुझसे उस रोज़ कहा था और तुम्हारी सलाह बमूजिब मैंने गुलशन को इस बात से आगाह कर दिया है । "

पाठकों को समझना चाहिए कि अयूब के साथ ज़ोहरा की जो कुछ बातें हुई थीं, अयूब ने याक़ूब पर ज़ाहिर कर दिया था और वह जगह भी याक़ूब को दिखलाई थी, जिसके अन्दर उतरने के लिये ज़ोहरा ने अयूब से बड़ी हुज्जत की थी । सो याक़ूब ने वेही सब हालात सौसन से कहे थे और उसने गुलशन को होशियार कर दिया था ! ख़ैर इस बारे में फिर भी लिखा जायगा । हां तो सौसन की बात सुनकर याक़ूब ने कहा,-

"ख़ैर, तो प्यारी, सौसन! अयूब पर मैं निहायत मुहब्बत रखता हूँ, इस वास्ते मेरा यह फ़र्ज़ है कि पेश्तर मैं अयूब और गुलशन को इस बला से बचाऊं, बाद उसके तुम्हारी या अपनी फ़िक्र करूं।"

इस पर सौसन ने कहा,-"बेशक, ऐसाही करना चाहिए।"

फिर इसी बारे में वे दोनों आपस में सलाह करने लगे।



पंद्रहवां परिच्छेद.

यह कैसा आशिक़ ! ! !

"ज़ब्त नालों को करूं हरदम कि रोऊं आह को।
मुझसे अब छिपती नहीं, कबतक छिपाऊं चाह को॥"
(ज़फ़र)

जिस रात को सौसन और याक़ूब में उस तरह की बातें होती थीं, उसी रात को दूसरी ओर कुछ और ही तमाशा हो रहा था; इस लिये सौसन और याक़ूब को तो थोड़ी देर के लिये वहीं छोड़ दीजिए और आइए, पाठक ! ज़रा दूसरे तमाशे की कैफ़ियत देखी जाय !

जिस ख़ाबगाह का बयान हम पहिले कर आए हैं, उसीमें छपरखट पर रज़ीया सोई हुई थी और नीचे फ़र्श पर ज़ोहरा ख़ुर्राटे ले रही थी। इतने ही में अपने चेहरे पर नक़ाब डाले और लाल पोशाक से अपने सारे बदन को छिपाए हुए कोई शख़्स दबे पैरों, उस (रज़ीया) की ख़ाबगाह के अन्दर आया और ज़ेब में से एक शीशी निकाल और उसमें से दो बूंद अर्क़ एक रूमाल के कोने में लगा, उसने उस रूमाल को बेगम की नाक पर रक्खा। रूमाल के रखते ही बेगम एक छींक मार कर बेहोश होगई। फिर उस नकाब-पोश ने उसी तरह ज़ोहरा को बेहोश किया और तब उसने उसी छपरखट की चादर में बेगम की गठरी बांधी और उस गठरी को उठा कर वह शख़्स उस दर्वाजे से बाहर हो गया, जिधर से एक रोज़ ज़ोहरा याक़ूब को ख़ाबगाह में लाई थी।

उस दर्वाज़े से बाहर होतेही उस नकाबपोश ने एक ओर की दीवार में कोई कल दबाकर दीवार के एक पत्थर को हटाया और उस राह से भीतर होकर फिर उसने वहांके पत्थर को ज्यों का त्यों बराबर कर दिया। फिर वह बेगम के गट्ठर को लिये हुए एक ऐसे सजे सजाए और आलीशान कमरे में पहुंचा, जो सजावट और वजहदारी में बेगम की ख़ाबगाह से कहीं बढ़ कर था। वह कमरा

गोल था, जिसका घेरा दोसौ हाथ से कम न था और उसकी सजावट या आराइश का कोई ठौर ठिकाना न था। वह बिल्कुल संगमर्मर और स्याहमूसे से बना हुआ था, उसके बीच की कड़ी में लटकती हुई बिल्लौरी हांड़ी में मोमबत्ती जल रही थी और बीचोबीच एक खुशनुमा छपरखट बिछा हुआ था। उस नकाबपोश ने बेगम को ले जाकर उसी छपरखट पर लिटा दिया और फिर वह लखलखा सुंघाकर बेगम को होश में लाया।

होश में आते ही बेगम मारे घबराहट के ज़ोर से चिल्ला उठी और अपने सामने एक नकाबपोश को देख और अपने तईं एक अनजानी जगह में पाकर एक दम घबरागई और बोल उठी,—

"या खुदा! मैं कहां हूं!"

नकाबपोश,—"आप अपने क़िले के अन्दर ही हैं।"

रज़ीया मारे घबराहट के इधर उधर नज़र दौड़ाकर देखने लगी और बोली,—

"यह कौन सी जगह है?"

नकाबपोश,—"हज़्रत! यह एक पोशीदा जगह है।"

रज़ीया,—(गुस्से से) "और तू कौन है, हरामज़ादे?"

नकाबपोश,—"अय, मलका! मैं तेरा आशिक़ हूं!"

यह सुनते ही रज़ीया मारे क्रोध के कांपने लगी और अंगिया के भीतर से छुरा निकाल, उस नकाबपोश पर झपटी, पर बात की बात में उस नकाबपोश ने रज़ीया के हाथ से खंज़र छीन लिया और उसे बरज़ोरी छपरखट पर बैठा कर कहा,—

"बेगम!—

"इतना भी कोई ख़फ़ा होता है!
आदमी से कुसूर होता है॥"

रज़ीया,—"अबे! हरामीपिल्ले! क्या मौत तेरी दामनगीर हुई है दोज़खी कुत्ते! अभी मैं तेरा सर काट लेती हूं।"

नकाबपोश,—"अय रज़ीया! इतनी गरमागरमी क्यों?—

"खुद गला काटूं, अगर खंज़र इनायत कीजिए।
देखिए दुख जायगी, नाज़ुक कलाई आपकी॥"

रज़ीया,—(तावपेच खाकर) "कम्बख़्त! तू है कौन?"

नकाबपोश,—"यह तो पहिले ही कह चुका हूं कि मैं तेरा

आशिकज़ार हूं।"

रज़ीया,—" और क्या तू ही, कमीने! मुझे इस अनजानी जगह में ले आया है?"

नकाबपोश,—" बेशक, बात ऐसी ही है।"

रज़ीया,—" तो क्या तुझे अपनी जान प्यारी नहीं है?"

नकाबपोश,—" तब तक तो बेशक वह प्यारी नहीं है, जब तक कि प्यारी! तुझे सीने से न लगाऊं।"

नकाबपोश ने बेगम के सवालों का जिस दिलेरी के साथ जवाब दिया और वह जिस शोख़ी के साथ उस (बेगम) के सामने डटा रहा, यह देख बेगम के होश उड़ गए और उसने उस नकाबपोश को 'साधारण व्यक्ति' न समझा। आखिर, रंग बदरंग देख, वह ढीली पड़गई और उसने दूसरे ढंग से उस नकाबपोश के साथ बातें करनी प्रारंभ कीं,—

रज़ीया,—"अच्छा भई! अब जब कि मैं हर तरह से तुम्हारे काबू में पड़ी हुई हूं तो मैं यही बिहतर समझती हूं कि तुम्हारे साथ नर्मी से पेश आऊं।"

नकाबपोश,—"यह तुम्हारी खुशी है; तुम चाहे, जिस तरह मेरे साथ पेश आओ, मगर बेगम! यह तुम बखूबी समझ लो कि सिवा मेरे साथ निक़ाह किए, तुम्हारी जान की ख़ैर नहीं है।"

रज़ीया ने समझा था कि,—'अगर मैं इस कंबख़्त के साथ नर्मी से बातें करूंगी तो यह मूज़ी भी नर्म हो जायगा;' किन्तु जब उसने नकाबपोश को ख़मीरी आटे की तरह और भी ऐंठता हुआ देखा तो वह फिर चटकी और झुंझला कर बोली,—

"मालूम होता है कि तू महज़ कमीना और बदमाश शख़्स है कि हिन्दुस्तान की सुल्ताना के साथ इस तरह की गुफ़्तगू करता है!"

नकाबपोश,—"बेशक, सुल्ताना साहिबा! आप बजा फ़र्माती हैं। मैं, जैसा कि आप मुझे समझ रही हैं, उससे भी बदतर और नाकारा हूं; मगर क्या मैं यह बात हुज़ूर से पूछ सकता हूं कि हिन्दुस्तान की मलका की दिल्लगी के लायक क्या एक अदना गुलाम हो सकता है?"

रज़ीया,—"फ़र्ज़ करो कि हो सकता है; फिर तुम्हें इन बातों

से मतलब ?"

नकाबपोश,—"वाक़ई ! आपने, सुल्ताना ! अपने ख़ान्दान की हैसियत के बमूजिब ही यह काम किया है । सच है, गुलाम ख़ान्दान की लड़की का दिल गुलाम को छोड़ और किसके साथ आशनाई करने के वास्ते रुजू होगा ?"

रज़ीया,—"तू क्या वाही बकता है ?"

नकाबपोश,—"मैं बहुत सही कह रहा हूं,—और देखो, इस बात पर तुम्हीं गौर करो कि मेरा कहना सही है या नहीं ! हिन्दुस्तान के फ़तह करनेवाले शहाबुद्दीन मुहम्मद ग़ोरी ने अपने गुलाम कुतबुद्दीन ऐबक को हिन्दुस्तान के तख़्तपर बैठाया था । फिर उसने अपनी लड़की अपने गुलाम कुतबुद्दीन को ब्याह दी; और कुतबुद्दीन ने अपनी लड़की अपने गुलाम शमसुद्दीन अलतिमश को दी थी, जिस कम्बख़्त ने अपने मालिक (कुतबुद्दीन) के बेटे, दिल्ली के दूसरे बादशाह आरामशाह को मार, बादशाही का ताज अपने सिर पर रक्खा था । हज़रत ! आप उसी गुलाम अलतिमश की लड़की हैं, फिर आपका दिल अगर गुलाम के ऊपर चल गया तो इसमें चटकने को क्या बात है और मैंने झूठही क्या कहा है ?"

रज़ीया,—"ख़ैर, जो कुछ हो, मगर तुम्हें इन बातों से क्या मतलब है ?"

नकाबपोश,—"यही कि एक मियान में दो तल्वारें नहीं रह सकतीं ।"

रज़ीया,—"इसका क्या मतलब है !"

नकाबपोश,—"यही कि रज़ीया के दो चाहनेवाले दुनियां में जिन्दः नहीं रह सकते ।"

रज़ीया,—"मगर, कम्बख़्त ! मैं तुझे नहीं चाहती ।"

नकाबपोश,—"और अय नेकबख़्त । तुझे गुलाम याक़ूब नहीं चाहता ! ! !"

रज़ीया हैरान थी कि, 'यह पोशीदा बात क्यों कर ज़ाहिर होगई !' कभी वह सौसन पर शक करती और कभी याक़ूब पर; और कभी उसे ज़ोहरा पर शक होता और कभी गुलशन पर; मगर अन्त में उसका शक सौसन, गुलशन और याक़ूब ही पर हुआ और उसने मनही मन इस बात का निश्चय कर लिया कि, 'यह

काम इन्हीं तीनों में से किसी न किसी का है।

निदान, फिर वह नकाबपोश की बातों का जवाब कुछ कड़ाई और कुछ नर्मी के साथ देने लगी; उसने कहा,–

"मैं जिस तरह हो सकेगा, याक़ूब को अपनी बात मानने के लिये मजबूर करूंगी और उसे अपने काबू में लाऊंगी।"

नकाबपोश,–"उसी तरह प्यारी! रज़ीया! मैं भी तुझे जैसे होगा, अपने काबू में लाऊंगा और तेरे साथ निक़ाह करूंगा।"

रज़ीया,–"यह कभी नहीं होसकता, चाहे तू! हरामज़ादे! मुझे मार भी डाल।"

नकाबपोश,–"जब कि तेरी किस्मत में रज़ीया! मरना ही लिखा है तो फिर मैं तुझे मौत के चंगुल से क्यों कर बचा सकता हूं! मगर नहीं, मैं अपने हाथों को तेरे खून से न रंगूंगा, चाहे तू मुझे कैसा ही ख़ूंख़ार, ज़ालिम, शोहदा या जो कुछ समझती हो।"

रज़ीया,—"तो तू अब मुझे मेरी किस्मत पर छोड़दे।"

नकाबपोश,–"हर्गिज़ नहीं, जब तक कि तू मेरे साथ निक़ाह न करलेगी, ताज़ीस्त इस मकान के बाहर की हवा तुझे नसीब न होगी और तू यहीं पड़ी पड़ी बगैर दाने पानी के तड़प तड़प कर मर जायगी।"

यह बात ऐसी थी और इसे उस नकाबपोश ने इस ज़ोर के साथ कहा था कि रज़ीया कड़े दिल की होने पर भी दहल गई, क्योंकि आख़िर वह स्त्री ही तो थी। और अब उसने यह बात भलीभांति समझली कि,–'यह ज़िद्दी नकाबपोश अपनी ज़िद से बाज़ न आवेगा, तो उसने दूसरा ढंग निकाला और कहा,–

"तो क्या अब तुम मेरी जान किसी तरह न छोड़ोगे?"

नकाबपोश,–"तुझ जैसी नाज़नी को अपने काबू में पाकर जो छोड़ दे, वह उल्लू ही नहीं, बल्कि उल्लू का इत्र है।"

रज़ीया,–"तो खैर, मुझे तुम्हारी बात मंजूर है, मगर पहिले तुम मेरे कई सवालों का जवाब दो।"

नकाबपोश,–"खुशी से पूछो, जो सवाल काबिल जवाब होगा, उसका जवाब दिया जायगा।"

रज़ीया,–"यह जगह कौनसी है और कहां पर है?"

नकाबपोश,–"इसके जवाब में मैं फ़क़त इतनाही कहूंगा कि यह

तुम्हारे क़िले के अन्दर ही है।"

रज़ीया,—"मुझे तुम मेरी ख़ाबगाह से उठा लाए ?"

नकाबपोश,-"हां, मगर बेहोश कर के, जो बेहोशी, यहां लानेपर दूर की गई।"

रज़ीया,—"ख़ैर तो आओ, मेरे पास बैठो, अपने चेहरे से नकाब हटा दो और अपना पता दो कि तुम कौन हो?"

नकाबपोश,—"ये तीनों बातें; यानी तुम्हारे पास बैठना, नकाब उलटना और अपना हाल बयान करना, तबतक नहीं हो सकता, जबतक कि तुम मेरे साथ निक़ाह न करलो।"

रज़ीया,-"भला सोचो तो सही कि जबतक तुम्हारी सूरत न देखलूं और तुम्हारा पता न पालूं, तुम्हारे साथ मैं क्योंकर निकाह कर सकती हूं?"

नकाबपोश,-"इसकी कोई ज़रूरत नहीं है, क्योंकि निक़ाह होजाने के बाद तुम पर मेरा कोई भी हाल छिपा न रह जायगा। इसलिये बिल्फ़ेल, तुमको अपने तईं मेरी मर्ज़ीही पर छोड़ देना चाहिए।"

रज़ीया,—"यह तो बड़ी ज़बर्दस्ती है!!!"

नकाबपोश,—"बेशक ऐसाही है और इसमें तुम्हारी भलाई छोड़ कर बुराई हर्गिज़ नहीं होगी।"

रज़ीया,—"ख़ैर तो वह काज़ी कहां है, जो निक़ाह की रस्में पूरी करेगा ?"

नकाबपोश,—"उस काम को, जो कि क़ाज़ी करता है, मैं ख़ुद बख़ुद बड़ी आसानी के साथ पूरा कर लूंगा।"

रज़ीया,—"ख़ैर, तो एक रोज़ की मुझे मुहलत दो, फिर जो कुछ तुम कहोगे, उसमें मुझे कोई उज़्र न होगा।

नकाबपोश,—"जी हां! मैं ऐसा ही बेवक़ूफ़ तो हूं कि आपको आज़ाद कर दूंगा! अजी हज़्रत! मेरे हाथ से बे हाथ हो कर क्या फिर आप मेरे हाथ कभी लग सकेंगी ?"

रज़ीया,—"वाह! यह क्या बात है? भई! सच तो यह है कि मैं तुम्हारी दिलेरी, मर्दुमी और ताक़त देख कर निहायत ख़ुश हुई हूं; इसलिये इस बात का तुम यक़ीन रक्खो कि अब सिवा तुम्हारे मेरे दिल में किसी दूसरे को जगह न मिलेगी।"

नकाबपोश,–"तुम्हारा कहना सही है, मगर इस बात का यकीन मुझे तब होगा, जब तुम याकूब का सर कटवा कर मेरे हवाले करोगी।"

रज़ीया,–"बेशक, यह बात मुझे मंजूर है और यह काम मैं खुशी के साथ कर डालूंगी, मगर इस वक्त तो वह काम नहीं हो सकता न?"

नकाबपोश,–"यह मैं भी समझता हूं कि वह काम इस वक्त नहीं हो सकता; मगर ख़ैर, जब तक याकूब का सर तुम न मंगा दोगी, इस क़ैद से तुम्हारा छुटकारा नहीं होगा।"

रज़ीया,–"यह तुमने दूसरा शर निकाला! तुम सोच सकते हो कि भला इतनी ज़ियादती से आपस में मिल्लत या मुहब्बत क्यों कर बढ़ सकती है?"

नकाबपोश,–"यानी तुम मेरे साथ निक़ाह कर लेने पर भी ज्योंहीं मेरे हाथ से छूटोगी, पहिले मेरी जान लेकर तब दूसरा काम करोगी; क्यों?"

रज़ीया,–"छिः! मेरे कहने का यह मतलब नहीं है; और फ़र्ज़ करो कि अगर मैं वैसाही सलूक तुम्हारे साथ करूं, जैसा कि तुम सोच रहे हो, तो?"

नकाबपोश,–"इन बातों की मुझे ज़रा भी पर्वा नहीं है; बिल्फेल तो मैं तुम्हारे साथ निक़ाह कर के हमबिस्तर होऊंगा, फिर जो होगा, देखा जायगा।"

रज़ीया,–"मगर, साहब! वह बात किस काम की, जिसका अख़ीर अच्छा न हो?"

नकाबपोश,–"रज़ीया; तुम्हारा किधर ख़याल है? अजी हज़्रत! मैं इस निक़ाह की सनद में तुम्हारे मुहर दस्तख़त की एक चीठी तुमसे लिखवा लूंगा, और जब तुम मेरे साथ दग़ा करने का इरादा करोगी तो वह ख़त तुम्हारे दर्बारियों को दिखला कर तुम्हारी फ़ज़ीहती करूंगा! अब आया समझ के बीच में—कि मैं किस तरह तुमको अपने कब्ज़े में किए रहूंगा?"

अब इस बात का जवाब वह बेचारी क्या देती! इसलिये चुप रही। पर जितनी देर तक इतनी बातें उसने कीं, घात बराबर अपनी उस कटार पर वह लगाए रही, जो नकाबपोश ने उससे

छीन कर अपने कमरबंद में खोंस ली थी। पलक के गिरने में तो देर भी लगती है, पर रज़ीया ने इतनी फुर्ती की कि उस नकाबपोश से कुछ भी करते धरते न बना और रज़ीया ने एकही झपट्टे में नकाबपोश के कमरबंद में से अपनी कटार खैंच ली और उसे भर-जोर पकड़, तन कर बोली,—

"ले, होशियार हो, कंम्बख़्त दोज़ख़ीकुत्ते ! मैं अभी तुझे दोज़ख़-रसीदः किए देती हूं।"

यों कह कर भूखी या चुटीली बाघिन की तरह वह नकाबपोश पर झपटी और चाहती थी कि कटार उसके कलेजे में भोंक दे; कि उस अजीब नकाबपोश ने बड़ी आसानी के साथ उस (रज़ीया) के हाथ से फिर कटार छीन ली और उसे अपनी मुट्ठी में दबा कर कहा,--

"रज़ीया! सचमुच मौत ने तेरा दामन मज़बूती के साथ पकड़ा है। मैं चाहता था कि तेरे खून से अपना हाथ न रंगूं, मगर नहीं, अब तेरा मरना ही बिहतर है; क्योंकि अब मैं इस कटार को बगैर तेरे कलेजे के पार पहुंचाए, नहीं रह सकता।"

यों कह कर उस नकाबपोश ने रज़ीया को उसी छपरखट पर पटक दिया और उस कटार को तान कर वह चाहता था कि बेगम के कलेजे के पार करदे कि इतने ही में उस कमरे का एक दर्वाज़ा बड़े ज़ोर से खुल गया और हाथ में नंगी तल्वार लिये हुए एक शख़्स उस कमरे के अन्दर दाख़िल हुआ।

* पहिला भाग समाप्त। *

